उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MAED-02

शिक्षा मनोविज्ञान

खण्ड

4

अधिगम के पक्ष

इकाई-13	5
सीखना	
इकाई-14	19
अभिप्रेरणा	
इकाई-15	32
स्मरण, विस्मरण एवं चिन्तन	
इकाई-16	50
विशिष्ट बालकों की शिक्षा	

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा, उ0प्र0रा0ट0मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 राम शकल पाण्डेय	पूर्व आचार्य,शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 हरिकेश सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

परिमापक

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा, उ0प्र0रा0ट0मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 पी0 सी0 सक्सेना	पूर्व आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 रीना अग्रवाल	रीडर, शिक्षा विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जून 2009,

मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

MAED-02 शिक्षा मनोविज्ञान

खण्ड-1 शिक्षा मनोविज्ञान की पृष्ठभूमि

इकाई-1 शिक्षा मनोविज्ञान का अर्थ, कार्यक्षेत्र एवं महत्व

इकाई-2 शिक्षा मनोविज्ञान की विधियाँ

इकाई-3 मनोविज्ञान के स्कूलों का शिक्षा में योगदान

इकाई-4 वृद्धि एवं विकास

खण्ड-2 विकास के आयाम

इकाई-5 शारीरिक विकास

इकाई-6 संज्ञानात्मक विकास

इकाई-7 संवेगात्मक विकास

इकाई-8 सामाजिक विकास

खण्ड-3 शिक्षार्थी की विशेषताएँ

इकाई-9 भाषा विकास

इकाई-10 संप्रत्यात्मक विकास

इकाई-11 बुद्धि, अभिक्षमता एवं सृजनात्मकता

इकाई-12 व्यक्तित्व

खण्ड-4 अधिगम के पक्ष

इकाई-13 सीखना

इकाई-14 अभिप्रेरणा

इकाई-15 स्मरण, विस्मरण एवं चिन्तन

इकाई-16 विशिष्ट बालकों की शिक्षा

खण्ड परिचय-4 अधिगम के पक्ष

गर्भावस्था, शैशवावस्था तथा किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक विकास तथा उसको प्रभावित करने वाले कारकों के विवेचन से स्पष्ट है कि शारीरिक विकास मानव विकास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष है तथा उचित परिस्थितियों में ही शारीरिक रूप से स्वस्थ शिशुओं, बालकों तथा किशोरों का निर्माण किया जा सकता है। संज्ञान से तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से होता है जिसमें संवेदना, प्रत्यक्षण, स्मृति, चिंतन आदि समस्त मानसिक क्रियायें सम्मिलित होती हैं। संज्ञानात्मक विकास का एक सिद्धान्त प्याजे द्वारा प्रतिपादित किया गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार बालकों में संज्ञानात्मक विकास की चार अवस्थायें होती हैं-संवेदी-पेशीय अवस्था, प्राक संक्रियात्मक अवस्था, ठोस संक्रिया की अवस्था तथा औपचारिक संक्रिया की अवस्था। पियाजे के सिद्धान्त की शिक्षकों के लिये अत्यन्त उपयोगिता है।

संज्ञानात्मक विकास की परिभाषा वायगोस्की द्वारा भी की गयी। वायगास्की ने अपने सिद्धान्त में भाषा और चिंतन के महत्व पर जोर दिया। संज्ञानात्मक विकास में ब्रूनर ने भी एक सिद्धान्त की व्याख्या की है। इसके अनुसार बालकों के संज्ञानात्मक विकास में सक्रियता, दृश्य प्रतिमा तथा सांकेतिक का महत्वपूर्ण स्थान है। संवेग व्यक्ति की उत्तेजित अवस्था है। मानव जीवन में संवेगों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। बालकों में संवेगों का विकास किस रूप में हुआ है। इसका प्रभाव उसके व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि कुछ लोग संवेग जन्मजात होते हैं। जबकि बहुत से संवेगों का विकास वातावरण में धीरे-धीरे होता है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था में बालकों में सभी प्रमुख संवेगों अर्थात् क्रोध, डर, उत्सुकता, हर्ष, स्नेह, दुःख आदि का विकास हो जाता है। किशोरावस्था तक आते-आते बालकों में वे सभी संवेग होते हैं जो कि प्रारम्भिक बाल्यावस्था में होते हैं। किन्तु इनका प्रकटीकरण बाल्यावस्था से भिन्न होता है।

परिपक्वता, शारीरिक विकास बुद्धि, वातावरण आदि कारक व्यक्ति के संवेगात्मक विकास को प्रभावित करते हैं। संवेगात्मक विकास किस रूप में होता है यह पूर्वानुमेय है। विभिन्न संवेगों का प्रकटीकरण आयु के अनुसार बढ़ता जाता है। इन संवेगों का ज्ञान एक अध्यापक को होना चाहिये। इनका अपना शैक्षिक निहितार्थ है। हमें यह आशा है कि आपको इस इकाई में सामाजिक विकास से संबंधित विभिन्न पहलुओं को पढ़ने में आनन्द आया होगा। आपने इस इकाई में पढ़ा कि सामाजिक विकास भी बालक के विकास का एक प्रमुख घटक है। सामाजिक विकास को शैक्षिक दृष्टिकोण से भी अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। सामाजिक विकास से तात्पर्य सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता सीखने से होता है।

विभिन्न अवस्थाओं जैसे-शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, बालक में सामाजिक विकास किस रूप में होता है का भी उल्लेख किया गया है।

सामाजिक विकास के मूल आधार के लिए बालकों को दूसरों के साथ रहने व व्यवहार करने के पर्याप्त अवसर मिलते रहने चाहिए। उन्हें दूसरे व्यक्तियों के साथ भावाभिव्यक्ति के साथ-साथ उनकी रूचियों को भी समझना चाहिए। साथ ही बालक को सामाजिक बनने की प्रेरणा तथा मार्गदर्शन भी प्रदान करना चाहिए।

सामाजिक विकास की प्रमुख कसौटियों के रूप में सामाजिक अनुरूपता, सामाजिक समायोजन, सामाजिक अन्तः क्रियाएं, सामाजिक सहभागिता, सामाजिक परिपक्वता आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए।

बालकों के सामाजिक विकास में शिक्षकों की भूमिका काफी अधिक हैं क्योंकि शिक्षकगण बालक के सामाजिक विकास को सीधे प्रभावित करते हैं।

इकाई 13 सीखना

संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 सीखने का अर्थ

13.4 अधिगम के सिद्धान्त

13.4.1 थार्नडाइक का सम्बन्धवाद का सिद्धांत

13.4.2 पॉवलव का अनुकूलित – अनुक्रिया सिद्धांत

13.4.3 स्किनर का क्रिया प्रसूत अनुबन्धन सिद्धांत

13.4.4 गथरी का प्रतिस्थापन का सिद्धांत

13.4.5 हल का क्रमबद्ध व्यवहार सिद्धांत

13.4.6 गेस्टाल्ट सिद्धांत

13.4.7 टालमैन का संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत

13.4.8 क्षेत्रीय सिद्धांत

13.4.9 निर्माणवाद

13.5 सीखने को प्रभावित करने वाले कारक

13.6 सारांश

13.7 अभ्यास कार्य

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

एक शिशु जब जन्म लेता है तो वह असहाय अवस्था में होता है। किंतु जैसे वह बड़ा होता है सीखना प्रारम्भ कर देता है। सीखने की प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती रहती है। विभिन्न प्रकार के आचार– विचार, व्यवहार आदि वह सीखता है। सीखने का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है।

इस इकाई का निर्माण इसी बात को ध्यान में रखकर लिखा गया है जिससे आप सीखने की संकल्पना का व्यापक अध्ययन कर सकेगें।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप

1. सीखना की व्यापक संकल्पना समझ सकेगे।
2. सीखने सम्बन्धी सिद्धातो को समझ सकेंगे।
3. सीखना सम्बन्धी मनोवैज्ञानिकों द्वारा दिये गये सिद्धांतों की तुलनात्मक विवेचना कर सकेंगे।
4. सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कर सकेगे।

13.3 सीखने का अर्थ

सीखना अनुभव व प्रशिक्षण द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन है। अनुभव दो प्रकार का हो सकता है, प्रथम प्रकार का अनुभव बालक स्वयं ग्रहण करता है जबकि दूसरे प्रकार का अनुभव, अन्य लोगों के अनुभव से लाभ उठाने की श्रेणी में आता है। प्रशिक्षण के अन्तर्गत औपचारिक शिक्षा आती है। एक माँ द्वारा जो शिक्षा दी जाती है वह औपचारिक व अनौपचारिक दोनों होती है। जिसका मुख्य उद्देश्य बालक को सिखाना होता है। सीखने के फलस्वरूप बालक के व्यवहार में स्थायी परिमार्जन होता है। विद्यालय का कार्य भी बालक को सिखाना है। किंतु सीखने से आशय मात्र व्यवहार परिमार्जन नहीं। सभी प्रकार के व्यवहार परिवर्तन को सीखना नहीं कहतें। सीखने से तात्पर्य व्यवहार में स्थायी परिवर्तन से होता है और यह परिवर्तन बालक को वातावरण से समायोजित होने में मद्द करते हैं।

सीखना = व्यवहार में स्थायी परिवर्तन
- अनुभव
  - (1) स्वयं के अनुभव
  - (2) दूसरों के अनुभव
- प्रशिक्षण

13.4 अधिगम के सिद्धान्त

सीखने के अनेक सिद्धान्त है। प्रत्येक सिद्धान्त किसी न किसी परिस्थिति की भली – भाँति व्याख्या करता है। इन सिद्धान्तों को निम्नलिखित वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है।

अधिगम के सिद्धान्त

साहचर्य या उत्तेजक – अनुक्रिया सिद्धान्त	ज्ञानात्मक सिद्धान्त	निर्माणवाद
i) थार्नडाइक का सम्बन्धवाद	i) गेस्टाल्ट सिद्धान्त	i) प्याजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त
ii) पावलीव का अनुकूलित – अनुक्रिया सिद्धान्त	ii) टालमैन का सिद्धान्त	ii) वायगोत्सकी का सिद्धान्त
iii) स्किनर का क्रिया –	iii) लेविन का क्षेत्रीय सिद्धान्त	
iv) गथरी का प्रतिस्थापन का सिद्धान्त		
v) हल का व्यवहार सिद्धान्त		

13.4.1 थार्नडाइक का संबधवाद का सिद्धान्त –

एडवर्ड ली थार्नडाइक ने सन् 1913 ई० मे प्रकाशित अपनी पुस्तक 'एजुकेशनल साइकोलॉजी' मे सीखने का एक नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किया था। इसे उत्तेजक – प्रतिक्रिया सिद्धान्त या सीखने का संबंध सिद्धान्त भी कहते है।

जब कोई व्यक्ति किसी कार्य को सीखना आरम्भ करता है तो उसके सामने एक विशेष स्थिति या उत्तेजक S होता है। यह स्थिति या उत्तेजक व्यक्ति को एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया R करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार एक विशिष्ट स्थिति या उत्तेजक का एक प्रतिक्रिया विशेष के साथ बन्घन हो जाता है। इस प्रकार के बन्धन के फलस्परूप व्यक्ति जब भविष्य में उस उत्तेजक का अनुभव करता है तो वही प्रतिक्रिया दोहराता है।

उलझन – बक्स प्रयोग – थार्नडाइक ने अपने सिद्धान्त के परीक्षण के लिए बिल्लियों के ऊपर कई प्रयोग किये । एक प्रयोग में उसने एक भूखी बिल्ली को उलझन बक्स में बन्द कर दिया था। जो एक खटके के दबने से बुलता था। बक्स के बाहर मछली रख दी गयी थी। बाहर रखी हुई मछली ने भूखी बिल्ली के लिए उत्तेजक का कार्य किया जिससे बिल्ली सक्रिय होकर मछली पाने के लिए प्रतिक्रिया करने लगी। वह बाहर निकलने का प्रयास करने लगी। एक बार बिल्ली का पंजा संयोग से खटके के ऊपर पड़ गया। फलतः वह बाहर आ गयी। थार्नडाइक ने इस प्रयोग को लगभग सौ बार दोहराया और एक समय ऐसा आ गया कि बिल्ली को उलझन बाक्स में बन्द कर देने पर वह बिना किसी त्रुटि के खटके को दवाकर बक्स का दरवाजा खोलने लगी।

थार्नडाइक ने सीखने के सिद्धान्त में तीन महत्पूर्ण नियमों का वर्णन किया है जो निम्नांकित है–

1) अभ्यास का नियम

2) तत्परता का नियम

3) प्रभाव का नियम

1) अभ्यास का नियम – यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि अभ्यास से व्यक्ति में पूर्णता आती है। अतः जब हम किसी पाठ या विषय का बार – बार दुहराते है तो उसे सीख जाते है। इसे थार्नडाइक ने उपयोग नियम कहा है। दूसरी तरफ जब हम किसी पाठ या विषय को दोहराना बन्द कर देते है तो उसे भूल जाते है। इसे इन्होंने अनुपयोग नियम कहा जाता है।

2) अभ्यास का नियम – इस नियम के अनुसार यदि व्यक्ति शारीरिक व मानसिक रूप से तैयार होता है तो सीखना होता है।

3) प्रभाव का नियम – थार्नडाइक के सिद्धान्त का यह सबसे महत्वपूर्ण नियम है। इस नियम के अनुसार व्यक्ति किसी अनुक्रिया या कार्य को उसके प्रभाव के आधार पर सीखता है। किसी कार्य या अनुक्रिया का प्रभाव व्यक्ति में या तो सन्तोषजनक होता है या खीझ उत्पन्न करने वाला। प्रभाव सन्तोषजनक होने पर व्यक्ति उसे सीख लेता है अन्यथा भूल जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी: (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखे।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से करें।

1. थार्नडाइक का सबन्धवाद क्या है ?

   ....

   ....

2. थार्नडाइक ने सीखने के कौन – कौन से नियम बताये है ?

   ....

   ....

   ....

13.4.2 पॉवलाव का अनुकूलित –अनुक्रिया सिद्धान्त–

अनुकूलित – अनुक्रिया के सिद्धान्त का आधार शरीर क्रिया विज्ञान का

सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त सम्बन्धवाद के इस सिद्धान्त को महत्व देता है कि उत्तेजना और प्रतिक्रिया का संबंध होना ही सीखना है। इसके प्रतिपादक पॉवलोव है। सभी प्राणियों में मूल रूप से प्रतिक्रिया तथा प्रवृत्तियाँ होती है जो उपयुक्त उत्तेजक द्वारा गतिशील हो जाती है। आन्तरिक या बाह्य प्रेरणा के फलस्वरूप उत्तेजक और अनुक्रिया में सम्बन्ध हो जाता है। इसी को सीखना कहते है। यदि स्वाभाविक उत्तेजक के साथ कोई कृत्रिम उत्तेजक भी कई बार प्रदान किया जाये तो कृत्रिम उत्तेजक का संबंध स्वाभाविक उत्तेजक से हो जाता है। इस प्रकार कृत्रिम उत्तेजक के कारण स्वाभाविक उत्तेजक के समान हुई प्रतिक्रिया को 'सम्बद्ध प्रतिक्रिया' या अनुकूलित प्रतिक्रिया कहते है।

उदाहरण – भोजन को देखकर कुत्ते के द्वारा लार जब भोजन के साथ घंटी बजती है तो कुछ समय बाद छोटी सुनकर लार टपकाना।

सम्बन्ध प्रत्यावर्तन या अनुबन्धन के पहले की स्थिति

अस्वाभाविक उत्तेजना	**अनुक्रिया**
(घण्टी की आवाज)	(कान का उत्तेजित होना)
स्वाभाविक उत्तेजना	**स्वाभाविक अनुक्रिया**
(भोजन)	(लार टपकाना)

सम्बन्ध प्रत्यावर्तन या अनुबन्धन हो जाने पर स्थिति –

अस्वाभाविक उत्तेजना	**सम्बद्ध प्रतिक्रिया**
(घण्टी की आवाज)	(लार टपकाना)

बोध प्रश्न

टिप्पणी: (क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखे।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से करें।

3. पॉवलव का सीखना का सिद्धान्त क्या है ?

....

....

4. पॉवलाव के प्रयोग में स्वाभाविक उद्‌दीपक क्या है ?

....

....

....

13.4.3 स्किनर का क्रिया प्रसूत अनुबन्ध सिद्धान्त –

क्रिया –प्रसूत अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रतिपादन अमेरिका के मनोवैज्ञानिक स्किनर ने 1938 में किया था। इस सिद्धान्त को नैमित्तिक अनुबन्ध सिद्धान्त भी कहते है।

स्किनर के क्रिया – प्रसूत अनुबन्धन में सही अनुक्रिया को होना अधिक महत्व रखता है। यहाँ केवल एक अस्वाभाविक या कृत्रिम उत्तेजक होता है जो वांछित अनुक्रिया के बाद दिया जाता है तथा इस अनुक्रिया को पुनर्बलित कर देता है। स्किनर ने अपने सिद्धान्त के आधार पर परम्परागत S-R सूत्र के R-S सूत्र में परिवर्तित कर दिया।

सीखने की प्रक्रिया में उत्सर्जित अनुक्रियाओं पर जो प्रभाव पड़ता है उसे समझने के लिए पुनर्बलन का सिद्धान्त सहायक है। इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने वाले का व्यवहार ही प्रबलन प्रात्त करने में सहायता करता है।

13.4.4 गथरी का प्रतिस्थापन का सिद्धान्त –

दिया हुआ उत्तेजक अथवा उत्तेजको का संचय एक निश्चित अनुक्रिया को निष्कर्षित करने की प्रवृत्ति रखता है और गथरी के अनुसार सीखना, इन जन्मजात अथवा अर्जित अनुक्रियाओं को दूसरे अथवा प्रतिस्थापित उत्तेजकों की ओर विस्तारित करने की क्रिया है।

गथरी के अनुसार – "एक उत्तेजक प्रतिमान जो एक प्रतिक्रिया के समय क्रियाशील है, यदि वह दोबारा होगा तो उस प्रतिक्रिया को उत्पादित करने की प्रवृत्ति रखेगा।"

गथरी के अनुसार, इस प्रकार के सीखने के लिए केवल एक तत्व उत्तेजक और प्रतिक्रिया का समय में सामीप्य होना अनिवार्य है। एक सम्बन्ध, उत्तेजक तथा प्रतिक्रिया के एक बन्धन में पूर्णतः दृढ़ हो जाता है, किन्तु अभ्यास में दोहराना कई प्रकार के सीखने के लिए आवश्यक होता है।

13.4.5 हल का क्रमबद्ध व्यवहार सिद्धान्त –

अमेरीकी मनोवैज्ञानिक, कलार्क एल० हल का सिद्धान्त सम्बन्धवादी मनोवैज्ञानिकों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। हल ने अनेक प्रयोग किये और उनके आधार पर अपने अनुसार सीखने की व्याख्या प्रस्तुत की। उसके सिद्धान्त को क्रमबद्ध व्यवहार सिद्धान्त या हल का प्रबलन सिद्धान्त कहा गया। इसे

अन्तर्नोद न्यूनता का सिद्धान्त भी कहते हैं।

किसी आवश्यकता को दूर करना इस सिद्धान्त का मुख्य तत्व है। अपने को पर्यावरण से समायोजित करने के लिए प्राणी किसी न किसी आवश्यकता का अनुभव करता है। आवश्यकता को पूरा करने के लिए वह जो कुछ भी उस क्षण से पहले अनुभव कर रहा होता है वह सब उसकी प्रतिक्रियाओं से सम्बद्ध हो जाता है। यह सम्बद्ध प्रतिक्रिया आवश्यकता का अनुभव होने पर होती है।

हल के अनुसार सीखना आवश्यकता की पूर्ति की प्रक्रिया के द्वारा होता है। हल ने चूहों पर अनेक प्रयोग किये। इन प्रयोगों के आधार पर उसने निष्कर्ष निकाला कि उत्तेजना (S) और अनुक्रिया (X) के बीच सम्बन्ध अन्तर्नोद पर निर्भर है। अन्तर्नोद आवश्यकता के कारण प्राणी में तनाव की स्थिति है। ऐसी स्थिति का अनुभव होने पर प्राणी में अनेक उत्तेजनाएं उत्पन्न हो जाती है। जो उसे उद्देश्य तक पहुंचाती है। इससे उनका तनाव कम हो जाता है और वह पुर्नबलन प्राप्त करता है। वह इस प्रकार वह कार्य को सीख लेता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क)अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

5) स्किनर के अनुसार सीखना क्या है?

....

....

....

6) गथरी ने सीखने के लिये केवल इकहरे प्रयास पर ही क्यों बल दिया है?

....

....

....

7) हल का अन्तर्नोद न्यूनता का सिद्धान्त क्या है?

....

....

....

13.4.6 गेस्टाल्ट सिद्धान्त

गेस्टाल्ट सिद्धान्त एक जर्मन स्कूल की देन है। गेस्टाल्ट स्कूल का जन्म सन 1920 ई0 में हुआ था। इस स्कूल में संबंधित व्यक्ति मैक्स वर्दीगर, कोहलर, तथा कोफका है। वर्दीमर इस सिद्धान्त के प्रवर्तक है और कोहलर तथा कोफका ने इस सिद्धान्त सिद्धान्त को आगे बढ़ाने का कार्य किया है।

गेस्टाल्ट जर्मन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है समग्राकृति या पूर्ण आकार। गेस्टाल्ट के प्रमुख सिद्धान्त इस प्रकार है–

1) मस्तिष्क में चीजों को व्यवस्थित करने का गुण होता है। यह विभिन्न वस्तुओं को तत्काल आकार–प्रकार और गुण प्रदान कर सकता है।

2) हम किसी भी चीज को पूर्ण रूप या समग्र रूप से देखते हैं। यद्यपि यह विभिन्न भागों या अंगों से बनी होती है, फिर भी उनसे भिन्न होती है।

3) यह सांख्यिकी में विश्वास नहीं करता है। मानव व्यवहार को गणितीय रूप से विश्लेषित नही किया जा सकता है। ये परिमाण की अपेक्षा गुणात्मकता में अधिक विश्वास करते है।

4) ये मनोवैज्ञानिक वातावरण में विश्वास करते है और उसी को अधिक महत्व देते है। ये भौतिक वातावरण को अधिक महत्व नहीं देते।

5) ये समाकृतिका के सिद्धान्त को मानते है।

कोहलन के अनुसार सीखना किसी स्थिति के समग्र या पूर्णरूप से समझने का प्रतिफल है। इसका सम्बन्ध प्रत्यक्षीकरण से है। सीखने में प्राणी सम्पूर्ण परिस्थिति को दृष्टि में रखकर समस्या का हल ढूंढने में सफल होता है। इसके अन्तर्गत सीखने की क्रिया में सफलता प्राप्त करने के लिए या समस्या का समाधान ढूंढने में अन्तदृष्टि या सूझ विद्यमान रहती है। इसलिए इसे अन्तदृष्टि या सूझ का सिद्धान्त भी कहते है।

यह सिद्धान्त पशुओं की अपेक्षा मनुष्यों पर सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है क्योंकि सूझ का सम्बन्ध बुद्धि, चिन्तन और कल्पना से होता है और यह क्षमता पशुओं में कम होती है।

13.4.7 टालमैन का संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त–

टॉलमैन द्वारा प्रतिपादित सीखने के सिद्धान्त के अनुसार सीखने की क्रिया में उद्देश्य का विशेष महत्व है। उसका विचार है कि प्राणी की सभी क्रियाएं

उद्देश्यपूर्ण या प्रयोजनपूर्ण होती है। सीखने की क्रिया में प्राणी का व्यवहार उद्देश्यपूर्ण होता है। उदाहरार्थ भूखा कुत्ता अपने मालिक की विशिष्ट ध्वनि सुनकर दौड़ना सीख जाता है। यहाँ पर कुत्ते का दौड़ना यांत्रिक नही है वरन किसी ज्ञान पर आधारित है। यदि उत्तेजक में अर्थ नही जुड़ा रहता है तो किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया नही होती है। टॉलमैन का विचार है कि उत्तेजक में उसी समय अर्थ जुड़ता है जब वह किसी की आवश्यकता और उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होते है।

इस सिद्धान्त के अनुसार सीखने वाला उद्देश्यों की सम्प्राप्ति के लिये प्रतीकों का अनुसरण करता है और विषय वस्तु में अर्थ सीखने का प्रयास करता है। टॉलमैन यह मानता है कि सीखना ज्ञानात्मक मानचित्र बनाना है। टॉलमैन के विचार से पुरस्कार, दण्ड एवं अनुबन्धन के प्रतीक है जो उसे यह ज्ञान देते हैं कि उसे कौन सा मार्ग चुनना है। वे ऐसे प्रतिनिधि नही है जो उनसे संबंधित कार्यो को करा सके या रोक सके।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

8) कोहलर का सीखने का सिद्धान्त क्या है?

....

....

....

9) टॉलमैन ने सीखने की क्या व्याख्या की है?

....

....

....

13.4.8 क्षेत्रीय सिद्धान्त–

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक कुर्त लेविन 1890–1947 हैं। उनका सिद्धान्त, सीखने के ज्ञानात्मक सिद्धान्त के तुरन्त बाद स्थान दिया गया है।

लेविन के मत का आधार वातावरण में व्यक्ति की स्थिति है। लेविन ने जीवन स्थल के आधार पर व्यक्ति के अनुभवों की व्याख्या की है। लेविन के अनुसार जीवन स्थल, वह वातावरण है जिसमें व्यक्ति रहता है और उससे प्रभावित होता है। किसी व्यक्ति का यह जीवन स्थल मनोवैज्ञानिक शक्तियों पर निर्भर होता है।

लेविन के सिद्धान्त में भर्त्सना, लक्ष्य तथा अवरोधक प्रमुख तत्व है। किसी व्यक्ति को लक्ष्य की संप्राप्ति के लिए अवरोधक को पार करना आवश्यक है। यह अवरोधक मनोवैज्ञानिक अथवा भौतिक हो सकता है। व्यक्ति के जीवन स्थल में अवरोधक के मनोवैज्ञानिक रूप से परिवर्तन होने के कारण सदैव नये निर्माण होते रहते है।

13.4.9 निर्माणवाद–

निर्माणवाद सीखने को दर्शन शास्त्र है। यह अधिगम की प्रक्रिया में अधिगमकर्ता को महत्व देता है। इसके अनुसार अधिगमकर्ता अपने लिए प्रत्ययों का निर्माण करता है, समस्या के बारे में अपने समाधान खोजता है। सीखना मानसिक संरचना के निर्माण का परिणाम है जिसमें अधिगमकर्ता नयी सूचना को पुरानी सूचना से अर्थपूर्ण ढंग से जोड़ता है। अतः सीखना अधिगमकर्ता की पृष्ठभूमि, विश्वासों व मनोवृत्तियों से प्रभावित होते है।

निर्माणवाद में सीखने के सिद्धान्त–

1. सीखना सक्रिय प्रक्रिया है जिसमें अधिगमकर्ता संवेदनाओं का प्रयोग करते हुए इनका अर्थपूर्ण निर्माण करता है।
2. जैसे–जैसे व्यक्ति सीखता जाता है, वह सीखने की प्रक्रिया को भी सीखता है।
3. इसके अनुसार सीखने के लिए मस्तिष्क तथा हाथ दोनों सक्रिय होना आवश्यक है।
4. सीखने की प्रक्रिया में भाषा निहित होती है।
5. सीखना एक सामाजिक क्रिया है। सीखना हमारे अन्य लोगों से सम्बन्ध जैसे शिक्षण, संगी–साथी व परिवार पर निर्भर करता है।
6. सीखना किसी परिप्रेक्ष्य में होता है। हम अपने पूर्व ज्ञान, विश्वासों, पक्षपातों तथा भय के सम्बन्ध में सीखते है।

7. सीखने के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। जितना ज्यादा हमारा ज्ञान होता है उतना ही हम सीखते है।

8. सीखना क्षणभर में नही हो जाता। सीखने में समय लगता है।

9. सीखने का मुख्य तत्व प्रेरणा है।

निर्माणवाद के अन्तर्गत मुख्य रूप से प्याजे, बायगोत्सकी, बूनर तथा डीवी के अधिगम सम्बन्धी विचार आते है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

10) जीवन स्थल क्या है?

....

....

....

11) निर्माणवाद ने सीखने को किस तरह परिभाषित किया किया है?

....

....

....

13.5 सीखने को प्रभावित करने वाले कारक

सीखने को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते है–

1. सामान्य बुद्धि
2. विशिष्ट बुद्धि
3. व्यक्ति का पूर्व में अर्जित ज्ञान व कौशल
4. परिवार का प्रभाव
5. व्यक्ति का व्यक्तित्व, उदाहरण व्यक्ति के शील गुण, चिन्ता का स्तर आदि
6. अधिगम के तरीके

7. व्यक्ति का आत्म प्रत्यय
8. संगी साथी का प्रभाव

13.6 सारांश

सीखना व्यवहार में होने वाला ऐसा परिवर्तन है जोकि अनुभव व प्रशिक्षण के फलस्वरूप होता है। सीखने के अनेक सिद्धान्त है। सम्बन्धवाद का सिद्धान्त का प्रतिपादन थार्नडाइक ने किया। इस तरह के अनुबंधन में प्राणी सीखने की परिस्थिति में स्वतंत्र होकर क्रियायें करता है और परिणाम से सीखता है।

अनुकूलित – अनुक्रिया सिद्धान्त का प्रतिपादन पॉवलाव ने किया। जिसमें प्राणी दो उद्दीपकों के बीच अनुबंधन के माध्यम से सीखता है। स्किनर द्वारा दिया गया सिद्धान्त क्रिया प्रसूत अनुबंधन कहलाया। स्किनर ने माना कि प्राणी क्रिया या व्यवहार को अपने परिणाम के आधार पर सीखता है। गथरी ने सीखने का उद्दीपक – अनुक्रिया सामीप्यता सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। हल जो प्रमुख व्यवहारवादी थे ने सीखने की व्याख्या प्रणोद ह्रास के माध्यम से की।

सीखने के सिद्धान्तों को सामान्यतः दो श्रेणियों में बांटा गया है– उद्दीपक–अनुक्रिया सिद्धान्त तथा केन्द्रीय या ज्ञानात्मक सिद्धान्त। गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक, टालमैन व लेविन का क्षेत्रीय सिद्धान्त क्रमशः केन्द्रीय सिद्धान्त की श्रेणी में है। जिसमें सीखने की व्याख्या सीखने की परिस्थिति में उत्पन्न उद्दीपकों के बीच अर्थपूर्ण संबंधन देखने के रूप में की जाती है।

सीखने की व्याख्या कुछ नवीन सिद्धान्तों ने की है। जिसमें निर्माणवाद की अहम भूमिका है। जिसमें प्याजे, वायगोत्सकी, ब्रूनर तथा डीवी आते है। जिन्होंने सीखने में अधिगमकर्ता की भूमिका पर विशेष बल दिया है।

एक ही परिस्थिति में एक व्यक्ति कुछ सीख लेता है जबकि अन्य नही सीख पाते है। अतः सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों का ज्ञान होना आवश्यक है।

13.7 अभ्यास कार्य

1. सीखने के नियमों की महत्ता लिखिए।
2. अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धान्त व क्रिया प्रसूत अनुबंधन सिद्धान्त के बीच प्रमुख अंतर लिखें।
3. टालमैन का सिद्धान्त शैक्षिक परिस्थितियों को किस प्रकार उन्नत कर

सकता है। विवेचना करें।

4. सीखने को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक कौन–कौन से हैं।

13.8 बोध प्रश्नो के उत्तर

1. थार्नडाइक का मानना था कि सीखना उद्दीपक तथा अनुक्रिया के बीच संबंध स्थापित होने से होता है। यदि यह अनुक्रिया प्राणी को सन्तोष प्रदान करती है तो भविष्य में इस उत्तेजना के लिए उसी अनुक्रिया के होने की सम्भावना बढ़ जाती है।
2. – अभ्यास का नियम

   – तत्परता का नियम

   – प्रभाव का नियम
3. यदि अस्वाभाविक उत्तेजना को स्वाभाविक उत्तेजना के साथ कई बार प्रस्तुत किया जाता है तो वह स्वाभाविक उत्तेजना के समान प्रतिक्रिया देने लगता है।
4. भोजन
5. सीखना उत्तेजना व प्रतिक्रिया में सम्बन्ध स्थापित करना है। यदि प्रतिक्रिया के बाद प्राणी को पुनर्बलन मिलता है तो यह सम्बन्ध भी स्थापित हो जाता है।
6. गथरी का मानना था कि उद्दीपक तथा अनुक्रिया के बीच का साहचर्य मात्र एक ही प्रयास में अधिकतम शक्ति पर पहुंच जाता है बशर्ते उनमें स्थान की समीपता हो।
7. प्राणी के सामने जब कोई उद्दीपक आता है तो वह अनुक्रिया करता है। इस अनुक्रिया के बाद जो पुनर्बलन मिलता है उससे यदि सम्बन्धित प्रणोद में कमी होती है तो सीखना होता है।
8. जब व्यक्ति किसी विषय या पाठ को सीखता है तो वह सीखने से संबंधित परिस्थिति के हर पहलू को नये ढंग से प्रत्यक्षण कर संगठित करने का प्रयास करता है। जिससे उसमें सूझ उत्पन्न होती है।
9. टॉलमैन ने सीखना को उद्देश्यपूर्ण क्रिया माना है। जिसमें प्राणी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु एक संज्ञानात्मक नक्शा बना कर सीखता है।
10. व्यक्ति तथा उसके वातावरण की वह सभी चीजें जो किसी क्षण व्यक्ति को प्रभावित करती हैं जीवन स्थल कहलाती हैं।

11. निर्माणवाद अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता को महत्व देता है। जिसमें अधिगमकर्ता नयी सूचनाओं को पुरानी सूचना से अर्थपूर्ण ढंग से जोड़ने का प्रयास करता है।

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तके

Chauhan, S.S. (1996) Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing House, New Delhi.

Hilgard, E.R. and Bawer, G.H. (1975) Theories of learning. Prentice Hall of India, New Delhi.

इकाई 14 अभिप्रेरणा

संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 प्रेरणा का अर्थ

14.4 प्रेरणा के स्त्रोत

14.5 प्रेरणा के सिद्धान्त

14.5.1 मूल प्रवृति सिद्धान्त

14.5.2 प्रणोद सिद्धान्त

14.5.3 प्रोत्साहन सिद्धान्त

14.5.4 विरोधी – प्रक्रिया सिद्धान्त

14.5.5 आवश्यकता – पदानुक्रम सिद्धन्त

14.5.6 मरे का सिद्धान्त

14.6 प्रेरणा की विधियाँ

14.6.1 पुरस्कार

14..6.2 दण्ड

14.6.3 श्रेणी अथवा अंक

14.6.4 सफलता

14.6.5 प्रतिद्वन्द्विता एवं सहयोग

14.6.6 परिणाम का ज्ञान

14.6.7 नवीनता

14.6.8 महत्वाकांक्षा का स्तर

14.6.9 रूचि

14.6.10 लक्ष्य का प्रभाव

14.6.11 आत्मीयता स्थापित करना

14.7 सारांश

14.8 अभ्यास कार्य

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

कोई भी व्यक्ति व्यवहार क्यो करता है। कक्षा में कोई छात्र अधिक पढ़ता है तथा कोई अधिक शैतानी करता है। कुछ छात्र अच्छे नम्बरों से पास होने की इच्छा रखते है। जब कोई व्यक्ति भूखा होता है, भोजन की तलाश करता है, घर बनवाता है या नये कौशलो को सीखता है। मनुष्य का व्यवहार कुछ तत्वो के द्वारा निर्देशित, संचालित एवं परिचालित होता है। इन्हीं को प्रेरक कहते हैं। इस इकाई में हम प्रेरणा का अर्थ, स्त्रोत, प्रकार, विभिन्न विधियो तथा सिद्धान्तो की चर्चा करेंगे। साथ ही शिक्षा एवं सीखने में प्रेरणा के महत्व पर भी प्रकाश डालेगे।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के पश्चात आप

1. प्रेरणा के प्रत्यय को समझ सकेंगे।
2. छात्रों को प्रेरणा देने की प्रमुख विधियो से परिचित हो सकेंगे।
3. मनोविज्ञान तथा शिक्षा मे प्रचलित प्रेरणा के प्रमुख सिद्धान्तो के बारे मे जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. एक शिक्षक के रूप मे प्रेरणा के महत्व को समझकर कक्षा मे प्रेरणा देने की उचित विधि का प्रयोग कर सकेगे।

14.3 प्रेरणा का अर्थ

प्राणी के व्यवहार को परिचालित करने वाली जन्मजात तथा अर्जित वृतिया को प्रेरक कहते है। यह वह अन्तवृति है जो प्राणी मे क्रिया उत्पन्न करती है और उस क्रिया को तब तक जारी रखती है जब तक उद्‌देश्य की पूर्ति नही जाती है। 'Motivation' शब्द लेटिन भाषा के 'Movers' का रूपान्तर है जिसका अर्थ है आगे बढ़ना 'to move' अर्थात प्ररणा का अर्थ है किसी भी व्यक्ति मे गति उत्पन्न करना। 'प्रेरणा' शब्द के शाब्दिक एवं मनोवैज्ञानिक अर्थो मे अन्तर होता है। शाब्दिक अर्थ मे किसी भी उत्तेजना को प्रेरणा कहते है। उत्तेजना के अभाव में किसी प्रकार की प्रतिक्रिया सम्भव नही होती है। यह उत्तेजना आन्तरिक एवं ब्राह्रय दोनो प्रकार की हो सकती है। मनोवैज्ञानिक अर्थ मे प्ररणा का अर्थ केवल आन्तरिक उत्तेजना से होता है। अर्थात प्रेरणा वह आन्तरिक शक्ति है जो व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

वर्नाड के अनुसार "प्रेरणा से तात्पर्य उन घटनाओ से है जो किसी विशेष उद्देश्य की ओर क्रिया को उत्तेजित करती है जबकि इससे पहले उस लक्ष्य की ओर कोई क्रिया या तो नही थी या बहुत कम क्रिया सम्भव थी।"

लावेल के अनुसार "अभिप्रेरणा एक ऐसी मनोशारीरिक प्रक्रिया है जो किसी आवश्यकता की संतुष्टि करेगी" जैसे भूख लगने पर खाना खाना।

14.4 प्रेरणा के स्त्रोत

प्रेरणा के प्रमुख 4 स्त्रोत होते है।

1. आवश्यकताएं
2. चालक
3. उद्दीपन
4. प्रेरक

1. आवश्यकताएं – प्रत्येक प्राणी की कुछ मौलिक आवश्यकताएं होती है। जिसके बिना उसका अस्तित्व सम्भव नही है जैसे भोजन, पानी, हवा इत्यादि। इन आवश्यकताओ की तृप्ति पर ही व्यक्ति का जीवन निर्भर करता है।

2. चालक – प्राणी की आवश्यकता से चालक का जन्म होता है। चालक शक्ति का वह स्त्रोत है जो प्राणी को क्रियाशील करता है। जैसे भोजन की आवश्यकता से भूख – चालक की उत्पत्ति होती है। भूख चालक उसे भोजन की खोज करने के लिए प्रेरित करता है।

3. उद्दीपन – पर्यावरण की वे वस्तुएं जिसके द्वारा प्राणी के चालको की तृप्ति होती है। उद्दीपन कहलाती है। भूख एक चालक है, और भूख चालक को भोजन संतुष्ट करता है। अतः भूख चालक के लिए भोजन उद्दीपन है। आवश्यकता, चालक व उद्दीपन तीनो मे सम्बन्ध होता है।

आवश्यकता, चालक को जन्म देती है, चालक बढ़े हुये तनाव की दशा है जो कार्य और प्रारम्भिक व्यवहार की ओर अग्रसर करता है। उद्दीपन बाहरी वातावरण की कोई भी वस्तु होती है। जो आवश्यकता की सन्तुष्टि करती है और इस प्रकार क्रिया के द्वारा चालक को कम करती है।

4. प्रेरक – प्रेरक शब्द व्यापक है। प्रेरको को आवश्यकता, इच्छा, तनाव, स्वभाविक स्थितियाँ, निर्धारित प्रवृतियाँ, रूचि, स्थायी उद्दीपक आदि से जाना जाता है। यह किसी विशेष उद्देश्य की ओर व्यक्ति को ले जाते है।

प्रेरको के प्रकार

- जन्मजात प्रेरक (भूख, प्यास, भय आदि)
- अर्जित प्रेरक
  - सामाजिक प्रेरक (समूह में रहना, संचय, युयुत्सा)
  - व्यक्तिगत प्रेरक (अभिवृत्ति, विश्वास,रूचि, महत्वकांक्षा का स्तर, लक्ष्य, आदत)

बोध प्रश्न

टिप्पणी: (क) दिये गये रिक्त स्थान पर अपना उत्तर लिखे।

(ख) ईकाई के अन्त मे दिये गए उत्तर से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।।

1. प्रेरणा को परिभाषित कीजिए ?

....

....

....

2. प्रेरणा के प्रमुख चार स्त्रोत को लिखिए ?

....

....

....

3. जन्मजात और आर्जित प्रेरकों में अन्तर बताइए।

....

....

....

14.5 प्रेरणा के सिद्धान्त

व्यक्ति के व्यवहार को कौन – कौन सी चीजे प्रभावित करती है इसके लिए मनोवैज्ञानिको ने अलग – अलग विचार प्रस्तुत किये है।

14.5.1 मूल प्रवृति सिद्धान्त

1890 मे विलियम जेम्स के अनुसार मनुष्य अपने व्यवहार का निर्देशन एवं नियंत्रण मूल प्रवृति की सहायता से करता है। सिग्मंड फ्रायड के अनुसार मूल प्रवृतियां प्रेरक शक्ति के रूप मे काम करते है। मूल प्रवृति का प्रमुख स्त्रोत शारीरिक आवश्यकताए होती है। दो तरह की मूल प्रवृति व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है – जीवन मूल प्रवृति एवं मृत्यु मूल प्रवृति। जवीन मूल प्रवृति का तात्पर्य उससे है जिससे व्यक्ति अपने जीवन की महत्वपूर्ण क्रिया करने के लिए प्रेरित होता है। मृत्यु मूल प्रवृति व्यक्ति को सभी तरह के विनाशात्मक व्यवहार करने की प्रेरणा देता है। यह दोनो एक साथ मिलकर व्यक्ति के व्यवहार को प्ररित करते है।

14.5.2 प्रणोद सिद्धान्त

इसके अनुसार अभिप्रेरणा में प्रणोद की स्थिति पायी जाती है। यह अवस्था शारीरिक आवश्यकता या बाहरी उद्दीपक से उत्पन्न होती है। हसमे वयक्ति क्रियाशील हो जाता है और उद्देश्यपूर्ण व्यवहार करने लगता है। फ्रायड का अभिप्रेरक सिद्धान्त (मनोविश्लेषण सिद्धान्त) प्रणोद सिद्धान्त पर आधारित है। फ्रायड के अनुसार यौन तथा आक्रमणशीलता दो प्रमुख प्रेरक है जिसकी बुनियाद बचपन मे ही पड़ जाती है।

14.5.3 प्रोत्साहन सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार अभिप्ररित व्यवहार की उत्पत्ति लक्ष्य या प्रोत्साहन के कुछ खास गुणो के कारण होती है। इस सिद्धान्त को प्रत्याशा सिद्धान्त भी कहा जाता है। जैसे भूख न होने पर भी स्वादिष्ट भोजन मिलने पर व्यक्ति उसकी ओर खिच जाता है।

14.5.4 विरोधी – प्रक्रिया सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन सोलोमैन तथा कौरविट के द्वारा 1974 मे किया गया। इसके अनुसार सुख देने वाले लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हम लोग प्रेरित रहते है। तथा जिससे हमे अप्रसन्नता होती है उससे दूर रहते है। प्रेरणा के इस सिद्धान्त को संवेग का सिद्धान्त भी कहते है।

14.5.4 आवश्यकता – पदानुक्रम सिद्धान्त

यह सिद्धान्त मानवतावादी मासलो द्वारा दिया है। इनके अनुसार प्रत्येक

व्यक्ति मे जन्म से ही आत्माभि व्यक्ति की क्षमता होती है जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती है। मासलो ने आवश्यकताओ या मानव अभिप्रेरको को एक क्रम मे रखा। मानवीय आवश्यकताए मुख्य रूप से पाँच होती है।

(i) शारीरिक आवश्यकताए – यह सबसे नीचे के क्रम में आती है इसमें भूख प्यास, काम आदि शारीरिक आवश्यकताएं आती हैं। सबसे पहले व्यक्ति इन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

(ii) सुरक्षा की आवश्यकता– यह शारीरिक आवश्यकताओ के बाद आती है। इसमे शारीरिक तथा संवेगिक दुर्घटनाओ से बचाने की आवश्यकता सम्मिलित है इसमे व्यक्ति डर तथा असुरक्षा से बचने की कोशिश करता है।

(iii) सदस्य होने तथा स्नेह पाने व देने की आवश्यकता – इस तरह की आवश्यकता के कारण व्यक्ति परिवार, स्कूल, धर्म, प्रजाति, धार्मिक पार्टी के साथ तादाम्य स्थापित करता है। व्यक्ति अपने समूह के अन्य सदस्यो के साथ स्नेह दिखाता है तथा उनसे स्नेह पाने की कोशिश करता है।

(iv) सम्मान की आवश्यकता – प्रथम तीन आवश्यकताओ की सन्तुष्टि होने पर सम्मान की आवश्यकता की उत्पत्ति होती है। इसमे आन्तरिक सम्मान कारक जैसे आत्मसम्मान, उपलब्धि, स्वायत्तता तथा ब्राह्य सम्मान कारक जैसे पद, पहचान आदि सम्मलित होते है।

(v) आत्म सिद्धि की आवश्यकता – आत्मसिद्धि सबसे उपरी स्तर की आवश्यकता है। यह पर सभी लोग नही पहुँच पाते है। आत्मसिद्धि मे अपने अन्दर छिपी क्षमताओ को पहचानकर उसे ठीक तरह से विकसित करने की आवश्यकता है।

14.5.6 मर्रे का सिद्धान्त

मरे ने अपने अभिप्रेरणा के सिद्धान्त को आवश्यकता के रूप मे बताया है। असन्तुष्ट आवश्यकताए व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है और तब तक बनी रहती है जब तक आवश्यकताओ की सन्तुष्टि नही होती है। प्रत्येक आवश्यकता के साथ एक विशेष प्रकार के संवेग जुड़े रहते है। 1930 मे बहुत सारे अध्ययनो के बाद मर्रे ने आवश्यकताओ के दो प्रकार बताये।

1. दैहिक आवश्यकताएँ – इस प्रकार की आवश्यकताए व्यक्ति के जीवन जीने के लिए आवश्यक होती है जैसे भोजन, पानी, हवा इत्यादि। मर्रे ने 12 दैहिक आवश्यकताए बतायी है।

2. मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ – यह आवश्यकताए शारीरिक नही होती है। मर्रे ने 28 आवश्यकताए बतायी है यह प्राथमिक आवश्यकताओं से उत्पन्न होती है जैसे– उपलब्धि की आवश्यकता, सम्बन्ध की आवश्यकता आदि।

मर्रे के अनुसार कभी – कभी व्यक्ति की दैहिक आवश्यकताओं की तुलना मे मनोवैज्ञानिक आवश्यकताए हावी हो जाती है।

बोध प्रश्न

नोट : (क) नीचे दिये गये प्रश्नो के सही उत्तरो मे गोले लगाइए

(ख) ईकाई के अन्त मे दिये गए उत्तर से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।

4. फ्रायड के अनुसार मूलप्रवृति के दो प्रमुख प्रकार निम्नलिखित है जो व्यक्ति को कार्य के लिए प्रेरित करते है।

    (क) आक्रामकता तथा चिन्ता

    (ख) अहं तथा परांह

    (ग) ऐरोस तथा थैनटोस

    (घ) उपांह तथा परांह

5. मैसलो के आवश्यकता पदानुक्रम सिद्धान्त मे सबसे उपरी स्तर की आवश्यकता कौन सी है।

    क) बचाव व सुरक्षा की आवश्यकता

    (ख) दैहिक आवश्यकता

    (ग) आत्म सिद्धि की आवश्यकता

    (घ) आत्म सम्मान की आवश्यकता

14.6 प्रेरणा की विधियां

प्रेरणा देने की विधियां निम्नलिखित है।

14.6.1 पुरस्कार

यह प्रेरणा देने की अत्यन्त प्रमुख विधि है। क्योकि इसके द्वारा व्यक्ति को एक स्तर प्रात्त होता है। सन्तोष मिलता है, उत्साह प्राप्त होता है, कार्य मे रूचि आती है, व्यक्ति कार्य करने के लिए अधिक लीन हो जाता है। पुरस्कार मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते है।

(क) मौखिक पुरस्कार – प्रशंसा करना।

(ख) चिन्हित पुरस्कार – मेडेल, गोल्ड स्टार, मानक उपधि, फिल्मफेयर अवार्ड इत्यादि।

(ग) भौतिक पुरस्कार – टाफी देना, धन देना इत्यादि।

रेली एवं लिविस ने पुरस्कार को प्रभाव पूर्ण बनाने के लिए निम्न लिखित सुझाव दिये है।

1. पुरस्कार स्वंय का प्राप्त किया हुआ होना चाहिए।
2. छोटे कार्यो के लिए पुरस्कार नही देना चाहिए।
3. पुरस्कार सदैव विशिष्ट कार्य के लिए दिए जाना चाहिए, सामान्य कार्य के लिए नही।
4. छात्रों को यह पता होना चाहिए कि उसका निष्पादन दूसरे से कितना श्रेष्ठ है। प्रत्येक पुरस्कार के लिए नियम निर्धारित होने चाहिए।
5. पुरस्कार को तुरन्त दिया जाना चाहिए।

14.6.2 दण्ड –

दण्ड के द्वारा व्यक्ति मे असंतोष तथा अरूचि उत्पन्न होती है। दण्ड मुख्य रूप से दो प्रकार के होते है।

(क) मौखिक दण्ड – डाँटना, आलोचना करना इत्यादि।

(ख) शारीरिक दण्ड – सजा देना, मारना, मुर्गा बनाना इत्यादि।

जोन्स, ब्लेयर तथा सिम्पसन ने 1965 मे यह पाया कि

1. दण्ड के द्वारा ईष्या तथा विद्वेष की भावना बढ़ती है।।
2. इससे छात्रों मे संवेगात्मकता इस हद तक बढ़ती है कि इससे सीखना लगभग असम्भव हो जाता है।
3. यह विद्यार्थियों मे तनाव, चिन्ता एवं थकान उत्पन्न करती है।
4. इससे कक्षा मारेल निम्न हो जाता है।

14.6.3 श्रेणी अथवा अंक –

श्रेणी अथवा अंक भी अच्छे प्रेरक के रूप मे कार्य करते है। यह एक प्रकार के चिन्हित पुरस्कार है। सारे विद्यार्थियो को एक आधार पर श्रेणी नही देनी चाहिए क्योकि कुछ विद्यार्थी आसानी से उस श्रेणी को प्राप्त कर लेते है और

उनमे श्रेष्ठता की भावना विकसित हो जाती है जबकि अन्य विद्यार्थियों को उसी श्रेणी लाने के लिए कठोर परिश्रम करना है।

14.6.4 सफलता –

प्रेरणा देने का प्रमुख आधार है बालक को अपने कार्य मे सफल बनाना। सफलता ही व्यक्ति को किसी कार्य को करने के लिए प्रेरित करती है। अग्रेजी मे एक कहावत है "Nothing Succeed Like Success" सफलता से व्यक्ति मे आत्मविश्वास बढ़ता है यह आत्मविश्वास व्यक्ति मे पाने योग्य लक्ष्य को निर्धारित करता है।

14.6.5 प्रतिद्वन्दिता एवं सहयोग –

प्रतिद्वन्दिता कभी – कभी सकारात्मक प्रेरणा के रूप मे कार्य करती है। यह तीन प्रकार से कार्यगत होती है।

(क) छात्रो मे अपने सहयोगियो के साथ अन्तःव्यक्तिगत प्रतिद्वन्द्विता होनी चाहिए। परन्तु मनोवैज्ञानिको एवं शिक्षा शास्त्रियो से इसको बहुत अधिक महत्व नही दिया है।

(ख) समूह प्रतिद्वन्दिता आपस मे सहयोग की भावना का विकास करती है।

(ग) अपने स्वयं से प्रतिद्वन्दिता – इस प्रकार की प्रतिद्वन्तिा सबसे प्रभावशाली होती है तथा मानसिक स्वास्थकर्त्ताओ के द्वारा इसको प्रभावशाली बताया गया है। शिक्षा के दार्शनिक आधार के अनुसार शैक्षिक कार्यक्रम मे आवश्यकताओ को सन्तुष्ट करने का काम करता है। तथा व्यक्तियो मे संवेगात्मक संतोष पैदा करती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी: (क) दिये गये रिक्त स्थान पर अपना उत्तर लिखे।

(ख) ईकाई के अन्त मे दिये गए उत्तर से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।।

6. पुरस्कार के तीन प्रकारों के नाम लिखिए।

....

....

7. प्रतिद्वन्दिता व सहयोग मे कौन सी विधि प्रेरणा देने के लिए ज्यादा उपयुक्त है और क्यो ?

....

....

....

14.6.6 परिणाम का ज्ञान

प्रेरणा प्रदान करने की यह सबसे ज्यादा प्रभावपूर्ण विधि है। छात्रो को इस बात का ज्ञान करवाना अत्यन्त आवश्यक है कि वह जिस समूह का सदस्य है उस समूह के अन्य लोग कैसा कर रहे है। छात्र को अपनी स्वयं की उन्नति की जानकारी देनी चाहिए जिससे वह अधिक परिश्रम से कार्य कर सके।

14.6.7 नवीनता

नवीनता ज्ञान प्राप्त करने मे प्रेरणा का कार्य करती है। शिक्षक को नवीनता लाने के लिए शिक्षण की विभिन्न विधियों को प्रयोग मे लाना चाहिए।

14.6.8 महत्वाकांक्षा का स्तर

महत्वाकांक्षा का स्तर यह निर्धारित करता है कि किसी भी व्यक्ति ने अपने लिये क्या, कितना कठिन लक्ष्य निर्धारित किया है। कुछ विद्यार्थी अपने लिए अपनी योग्यतानुसार लक्ष्य निर्धारित करते है जबकि अन्य विद्यार्थी या तो बहुत उच्च या निम्न लक्ष्य निर्धारित करते है। शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह छात्रो के महत्वाकांक्षा के स्तर के आधार पर लक्ष्य निर्धारित करने मे उनकी सहायता करें।

14.6.9 रूचि

प्रेरणा प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम शिक्षक को छात्रो की रूचियो को जानना चाहिए। बालक की पाठ मे रूचि उत्पन्न करनी चाहिए। अतः अध्यापक को पढ़ाए जाने वाले पाठ को बालक की रूचि से सम्बन्धित करना चाहिए।

14.6.10 लक्ष्य का प्रभाव

टोलमेन के अनुसार किसी भी व्यक्ति का व्यवहार लक्ष्य केन्द्रित या उद्देश्यपूर्ण होता है शिक्षक को ऐसे लक्ष्यो का निर्धारण करे जो छात्रो की आवश्यकतानुरूप हो।

14.6.11 आत्मीयता

उच्च स्तर के विद्यार्थियो के लिए यह विधि प्रेरणा प्रदान करने के लिए अत्यन्त सहायक होती है। इसके लिए छात्रो से प्रश्न पूछना, विषय से सम्बन्धित

कहानी सुनाना, शारीरिक क्रियाओ मे छात्रो की भागीदारी, प्रशंसा, छात्रो को नाम से सम्बोधित करना आदि विधियों को अपनाया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी: (क) दिये गये रिक्त स्थान पर अपना उत्तर लिखे।

(ख) ईकाई के अन्त मे दिये गए उत्तर से अपने उत्तर की तुलना कीजिए।।

7. प्रेरण देने की प्रमुख विधियो मे से छोटे बच्चो के शिक्षण मे उपयोग मे आने वाली पाँच विधियों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

9.. उच्च स्तर के छात्रों के लिए प्रेरणा की प्रमुख विधियों के नाम लिखे।

....

....

14.7 सारांश –

व्यक्ति के प्रत्येक कार्य और व्यवहार का परिचालन करने वाली कुछ प्रेरक शक्तियां होती है जो उसे विभिन्न परिस्थितियों मे कार्य तथा व्यवहार करने के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करती है। अभिप्रेरणा के प्रमुख स्त्रोत आवश्यकताए, चालक उद्दीपक तथा प्रेरक है। प्रेरक का वर्गीकरण अलग–अलग मनोवैज्ञानिको ने अलग–अलग ढंग से किया है परन्तु मुख्य रूप से जन्मजात तथा अर्जित दो प्रकार के प्रेरक होते है। इस ईकाई में हमने आपको शिक्षा में अभिप्रेरणा की मुख्य विधियों के बारे में बतलाया है साथ ही प्रेरणा के प्रमुख सिद्धान्तों को बताया है। जिसमें प्रणोद सिद्धान्त, प्रोत्साहन सिद्धान्त विरोधी प्रक्रिया सिद्धान्त, आदर्श स्तर सिद्धान्त, आवश्यकता पदोनुक्रम सिद्धान्त, लक्ष्य निर्धारण सिद्धान्त प्रमुख है। सीखने की प्रक्रिया मे अभिप्रेरणा का प्रमुख कार्य है यह व्यवहार को शक्तिशाली बनाने के साथ–साथ व्यवहार का चुनाव करता है तथा उसे संचालित करता है।

14.8 अभ्यास कार्य –

अपने आस–पास के एक विद्यालय के किसी एक कक्षा का चयन कीजिए। वहाँ पर प्रेरणा प्रदान करने की शक्तियों के रूप में प्रशंसा तथा निन्दा का मूल्यांकन कीजिए।

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. प्रेरणा एक आन्तरिक शक्ति है जो आवश्यकता से उत्पन्न होती है और ऐसी क्रिया की ओर गतिशील होती है जो कि आवश्यकता को संतुष्ट करती है।

2. प्रेरणा के प्रमुख 4 स्त्रोत निम्नलिखित है।

   (A) आवश्यकता

   (B) चालक

   (C) उद्दीपन

   (D) प्रेरक

3. जन्मजात प्रेरक–ये प्रेरक, व्यक्ति में जन्म से पाये जाते है तथा जीवन के लिए आवश्यक होते है। इनको जैविक या शारीरिक प्रेरक भी कहते है जैसे भूख, प्यास, काम, निद्रा, विश्राम। अर्जित प्रेरक वे होते है जो सीखे जाते है इसको द्वितीय प्रेरक भी कहते है जैसे रूचि, आदत, सामुदायिकता इत्यादि।

4. ग

5. ग

6. मौखिक पुरस्कार
   चिन्हित पुरस्कार
   भौतिक पुरस्कार

7. सहयोग। कारण स्वयं की समझ से लिखे।

8. पुरस्कार
   रूचियाँ
   सफलता
   नवीनता

9. सफलता
   नवीनता
   आत्मीयता स्थापित करना

14.10 कुछ उपयोगी पुस्तके

Mathur S.S.: Educational Psychology : Vinod Pustak Mandir, Agra, U.P. India.

Pathak P.D. (2008) शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

Chauhan, S.S. (1996) Advanced Educational Psychology, Vikas Publishing House, New Delhi.

इकाई–15 स्मरण, विस्मरण तथा चिंतन

संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 स्मृति

15.4 स्मृति के भाग

15.4.1 सीखना

15.4.2 धारण

15.4.3 पुनर्स्मृति

15.4.4 पहचान

15.5 अच्छी स्मृति की विशेषताएँ

15.6 स्मृति प्रभावक तत्व

15.7 विस्मरण

15.8 विस्मरण के सिद्धांत

15.9 विस्मरण के कारण

15.10 विस्मरण का निराकरण

15.11 चिन्तन

15.11.1 चिन्तन की विशेषताएँ

15.11.2 चिन्तन प्रक्रिया

15.11.3 चिन्तन के प्रकार

15.12 चिन्तन प्रभावक तत्व

15.13 चिन्तन का शैक्षिक महत्व

15.14 सारांश

15.15 अभ्यास कार्य

15.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

स्मृति से तात्पर्य सीखे गये पूर्व अनुभवों को मस्तिष्क में संचित व रखने की क्षमता से होता है। सामान्यतः स्मृति के दो महत्वपूर्ण पक्ष बताये गये है। धनात्मक पक्ष तथा ऋणात्मक पक्ष। स्मृति के धनात्मक पक्ष से तात्पर्य है पूर्व या गत अनुभूतियों को मस्तिष्क में संचित रखना तथा ऋणात्मक पक्ष से तात्पर्य है इस अनुभूतियों को संचित कर पाने में असफल होना है। अतः संक्षेप में हम कह सकते हैं कि स्मति का धनात्मक पक्ष स्मृति तथा ऋणात्मक पक्ष विस्मरण है। यदि हम अपनी अनुभूतियों के विषय में सोचकर या उन्हें पुनः स्मरण करके मस्तिष्क में लाते है तो इस प्रक्रिया को स्मरण की संज्ञा दी जाती है। प्रायः यह भी पाया गया है कि जो कुछ हमने याद किया है, उसका पूर्ण स्मरण नही हो पा रहा है। बहुत सी बातें विस्मृत हो जाती है। इस इकाई में स्मरण विस्मरण तथा चिन्तन सम्बन्धी प्रत्ययों के बारे में जानेंगे।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप

- स्मृति, विस्मृति तथा चिन्तन को भलीं–भांति समझ पायेंगे।
- तर्क द्वारा स्मरण तथा विस्मरण को विलगित कर पायेंगे।
- विषय का विश्लेषण भलीं भांति कर पायेंगे।
- स्मृति, विस्मृति तथा चिन्तन की प्रक्रिया को रेखाचित्र द्वारा दर्शा पायेंगे।
- इन प्रक्रियाओं को दैनिक जीवन से तारतम्य स्थापित कर पायेंगे।
- स्मृति, विस्मृति तथा चिन्तन प्रक्रियाओं के चरणों को सूचीबद्ध कर पायेंगे।

15.3 स्मृति

स्मरण एक मानसिक प्रक्रिया है। जिसमें व्यक्ति धारण की गयी विषय वस्तु का पुनः स्मरण करने चेतना में लाकर उसका उपयोग करता है। किसी विषय वस्तु के धारण के लिए सर्वप्रथम विषय वस्तु का सीखना आवश्यक है। अधिगम के बिना धारण करना असम्भव है। अधिगम के फलस्वरूप प्राणी में कुछ संरचनात्मक परिवर्तन होते हैं जिन्हें स्मृति चिन्ह कहते हैं, ये स्मृति चिन्ह तब तक निष्क्रिय रूप में पड़े रहते हैं जब तक कोई बाहरी उद्दीपक उन्हें जागृत नही करता। ये स्मृति चिन्ह अर्थात संरचनात्मक परिवर्तन किस रूप में होते है यह

कहना दुष्कर है। फिर भी इनहें जैविक रासायनिक परिवर्तन स्वीकार किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिकों ने स्मरण को भिन्न भिन्न ढंग से परिभाषित किया है।

हिलगार्ड तथा एटकिन्स के अनुसार – "पूर्ववत सीखी गयी प्रतिक्रियाओं को वर्तमान समय में व्यक्त करना ही स्मरण है।"

मैक्डूगल – "स्मृति का तात्पर्य भूतकालीन घटनाओं के अनुभवों की कल्पना करना एवं पहचान लेना है कि वे स्वयं के ही भूतकालीन अनुभव है।"

15.4 स्मृति के भाग

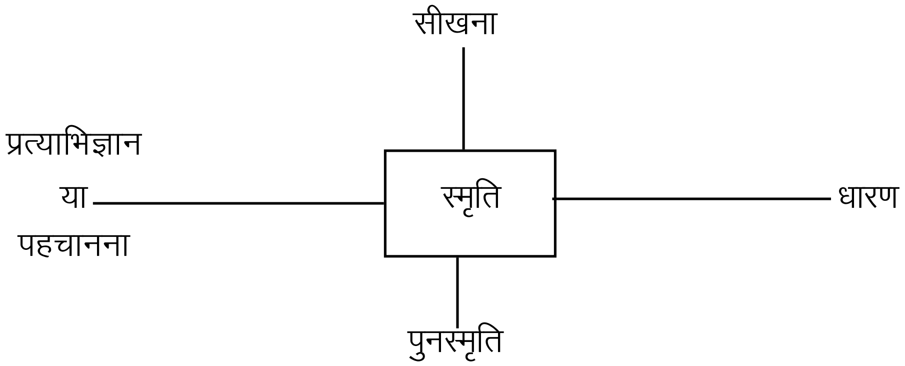

स्मृति एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है। इस प्रकार का विश्लेषण किया जाए तो इसमें चार प्रमुख खण्ड सन्निहित है –

15.4.1 सीखना –

स्मृति प्रक्रिया में सर्वप्रथम सीखने की क्रिया होता है। हम नित्यप्रति नवीन क्रियाओं को सीखते हैं। सीखने का क्रम जीवन पर्यन्त चलता रहता है। सीखने के पश्चात हम सीखे हुए अनुभव का स्मरण करते हैं। अर्थात अधिगम या सीखना प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूपेण स्मृति को प्रभावित करता है। सीखना जितना प्रभावकारी होगा, स्मृति उतनी तेज होगी।

15.4.2 धारण –

वुडवर्थ तथा श्लास वर्ग के अनुसार धारण स्मृति की चार प्रक्रियाओं में से एक है। प्राप्त किये गये अनुभव मस्तिष्क पर कुछ चिन्ह छोड़ जाते हैं। ये चिन्ह नष्ट नही होते। कुछ समय तक तो ये चिन्ह चेतन मस्तिष्क में रहते हैं, फिर अचेतन मस्तिष्क में चले जाते हैं।

धारण को प्रभावित करने वाले कारक

1. मस्तिष्क की बनावट
2. सीखने की मात्रा
   - सीखे गये विषय का स्वरूप
     - विषय की सार्थकता
     - विषय की लम्बाई
     - सीखे गये विषय का क्रम में स्थान
     - सीखे गये विषय का वातावरण
     - सीखे गये विषय की भावानुभूति
   - सीखने की विधियाँ
     - अविराम तथा विराम विधि
     - पूर्ण तथा आंशिक विधि
     - आवृत्ति द्वारा स्मरण
3. धारणकर्ता की विशेषता
   - आयु
   - स्वास्थ्य
   - मौन
   - बुद्धि
   - अभिरूचि
   - सीखने की इच्छा

15.4.3 पुनस्मृति

पुनर्स्मृति स्मृति प्रक्रिया का तीसरा महत्वपूर्ण खण्ड है। यह वह मानसिक प्रक्रिया है जिसमें पूर्व प्राप्त अनुभवों को बिना मौलिक उद्दीपक के उपस्थित हुए वर्तमान चेतना में पुनः लाने का प्रयास किया जाता है। पुनर्स्मृति कहलाती है। जिन तथ्यों का धारणा उचित ढंग से नही हो पाता उनका पुनस्मृर्ति करने में कठिनाई होती है।

15.4.4 पहचान –

पहचानना स्मृति का चौथा अंग है। पहचान से तात्पर्य उस वस्तु को जानने से है जिसे पूर्व समय में धारण किया गया है। अतः पहचान से तात्पर्य पुनः स्मरण में किसी प्रकार की त्रुटि न करना है। सामान्यतः पुनः स्मरण तथा पहचान की क्रियाएं साथ–साथ चलती हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

1) स्मृति को परिभाषित करें?

....

....

2) स्मृति के प्रमुख भाग लिखें?

....

....

....

15.5 अच्छी स्मृति के विशेषताएं

अच्छी स्मृति की प्रमुख विशेषताएं निम्नवत् है।

1. **शीघ्र अधिगम–** जिस वस्तु को शीघ्र देखा जाता है, वह उतनी ही अच्छी तरह स्मरण हो जाती है। शीघ्र सीखने पर सीखने की विधियों, वातावरण तथा योग्यता का प्रभाव पड़ता है।

2. **उत्तम धारण–** जितनी अच्छी धारण शक्ति होगी उतनी अच्छी स्मृति समझी जायेंगी। जो व्यक्ति किसी अनुभव को अधिक समय तक धारण कर सकता है। वह अच्छी स्मृति वाला कहलाता है। जिस छात्र की ध ारणा शक्ति कमजोर होती है, उसकी स्मृति क्षीण होती है।

3. **शीघ्र प्रत्यास्मरण–** स्मृति की विशेषता यह है कि जो कुछ भी याद किया जाये या अनुभव प्राप्त हो, उसका प्रत्यास्मरण शीध्र हो जाये। प्रायः ऐसे व्यक्तियों का अभाव नहीं जो यह कहते सुने जाएं कि उन्हें कुछ याद आ रहा है। अच्छी स्मृति वाला व्यक्ति पूर्वानुभवों का प्रत्यास्मरण शीघ्र कर लेता है।

4. **शीघ्र अभिज्ञान–** अच्छी स्मृति की एक आवश्यक विशेषता शीघ्र पहचानने की भी है। अच्छी स्मृति वाला व्यक्ति सम्बन्धित अनुभवों तथा प्रतिमाओं को शीघ्र पहचान लेता है।

15.6 स्मृति प्रभावक तत्व

स्मृति का शिक्षा में अत्याधिक महत्व है। यह सर्वविदित है कि अर्जित शैक्षणिक उपलब्धियों का आधार ही स्मृति है। स्मृति के आधार पर ही बालक का मूल्यांकन किया जाता है। जो बालक क्षीण स्मृति के कारण परीक्षा के प्रश्नों का उत्तर भलीं–भांति नही दे पाते, वे भले ही अन्य योग्यताओं में निष्पात हों, उनकी सफलता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संदिग्ध समझी जाती है।

स्मृति को प्रभावित करने वाले तत्व प्रमुख है –

1. **मानसिक स्थिति–** किसी अनुभव को उस समय तक स्मृति जन्य नहीं बनाया जा सकता जब तक छात्रों को मानसिक रूप से किसी तथ्य को स्मरण योग्य नही बना लिया जाता।

2. **प्रेरणा–** किसी ज्ञान या अनुभव को बहुत समय तक स्मरण करने के लिए या उसे ग्रहण करने के लिए आवश्यक है कि छात्रों में उस विषय के प्रति प्रेरणा उत्पन्न हो।

3. **सार्थक सामग्री–** स्मरण की जाने योग्य सामग्री यदि सार्थक सामग्री नही हैं तो उसे वे याद करने के पश्चात भी भूल जायेंगे।

4. **दोहराना–** छात्रों को याद की जाने वाली वस्तुओं का अभ्यास बार–बार कराया जाना चाहिए। यदि दोहराने की प्रक्रिया में कहीं पर कमी रहेगी तो स्मरण उतना ही क्षीण हो जायेगा।

5. **शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य–** जो बालक शारीरिक या मानसिक रूप से स्वस्थ नही होते वे किसी बात को स्मरण करने में सुविधा अनुभव नही करते। इसके विपरीत शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से स्वस्थ बालक किसी भी तथ्य को सहज ही स्मरण कर लेते हैं।

6. **अधिगम की विधियाँ–** स्मृति पर इस बात का भी प्रभाव पड़ता है कि किसी तथ्य को किस विधि से पढ़ाया गया है। विधि का प्रयोग यदि उचित आयु समूह के बालकों पर होता है। तो पाठ्यविषय निश्चित रूप से अच्छा याद हो जायेगा।

7. **पाठ्य सामग्री–** स्मृति इस बात से भी प्रभावित होती है कि पाठ्य सामग्री की प्रकृति किस प्रकार की है। मनोवैज्ञानिकों ने अच्छी पाठ्य सामग्री के विषय में कहा है–

   क) पाठ्य सामग्री नवीन होनी चाहिए। नवीन पाठ्य सामग्री छात्रों में प्रेरणा तथा कौतुहल उत्पन्न करती है। नवीन पाठ्य सामग्री को पूर्वज्ञान के

आधार पर विकसित किया जाये।

ख) पाठ्य सामग्री में उत्तेजना की तीव्रता का होना आवश्यक है। यदि पाठ्य सामग्री का प्रभाव उत्तेजक है तो उसका प्रभाव स्मृति पर पड़ेगा।

ग) पाठ्य सामग्री में विषय स्पष्ट होना चाहिए। अस्पष्ट विषय छात्रों को याद नही रह पाते।

8. **परीक्षण–** समय–समय पर सम्बन्धित विषयों का परीक्षण करके छात्रों की स्मृति को विकसित किया जा सकता है। परीक्षणों से छात्रों को स्मरण का अभ्यास होता है।

9. **स्मरण की इच्छा–** यदि बालक किन्हीं तथ्यों को स्मरण न रखना चाहे तो उसे बाध्य नही किया जा सकता। अतः सिखाये जाने वाले अनुभवों के प्रति छात्र की इच्छा तथा रूचि को जागृत करना आवश्यक है। यदि छात्र किसी चीज को सीखना नही चाहता है तो उसके साथ जबरदस्ती नही की जा सकती। सीखने के लिए सीखने वाले की इच्छा शक्ति का होना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

3) अच्छी स्मृति की विशेषताएं लिखिए।

....

....

....

4) स्मृति को प्रभावित करने वाले कारकों का उल्लेख करें।

....

....

....

15.7 विस्मरण

विस्मरण से तात्पर्य स्मरण की विफलता से है जब व्यक्ति अपने भूतकाल के अनुभवों को चेतन में लाने में असफल हो जाता है, तब उसे विस्मृति कहते

हैं। जिस प्रकार से जीवन को उपयोगी तथा सुखी बनाने के लिए स्मृति आवश्यक है, उसी प्रकार हमारे जीवन में विस्मृति की भी उपयोगिता तथा महत्व है।

मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए भी बहुत सी बातों की विस्मृति बहुत आवश्यक है। यदि अतीत के अनुभव व्यक्ति को सदैव परेशान करते रहते है। और वह अनेक प्रकार के मानसिक रोगों को उत्पन्न करते है। तो दुखद घटनाओं को भूल जाना लाभप्रद है।

मन के अनुसार – "सीखी गई बातों को धारण रखने या पुनः स्मरण रखने की असफलता विस्मरण है"

ड्रेवर के अनुसार – "विस्मरण से तात्पर्य किसी समय प्रयास करने पर भी किसी पूर्व अनुभव को याद करने अथवा सीखे गये कार्य को करने में असफलता से है।"

15.8 विस्मरण के सिद्धान्त

विस्मरण के प्रमुख सिद्धान्त इस प्रकार है–

1) **निष्क्रिय या अनुप्रयोग का सिद्धान्त–** विस्मरण मस्तिष्क में स्मरण चिन्हों के धुंधले होने के कारण होता है। स्मरण चिन्हों का बहुत समय तक उपयोग न होने से भी विस्मरणों की प्रक्रिया को बल मिलता है समय के अन्तराल के साथ–साथ विस्मरण बढ़ता है।

2) **पूर्व प्रभावी बाधाओं का सिद्धान्त–** अधिगम की भांति विस्मरण भी एक सक्रिय क्रिया है यह स्मृति चिन्हों के हलके पड़ने के कारण ही नहीं होती है। पुराने तथा नये अनुभवों के मध्य प्रतिक्रिया होने से विस्मरण की सक्रिय क्रिया होती है। बाद में सीखी गई क्रिया पूर्व क्रिया के प्रत्येक स्मरण में बाधा उपस्थित है। और व्यक्ति भूलने लगता है।

3) **उद्दीपन दशाओं में परिवर्तन–** प्रत्यास्मरण की प्रक्रिया के दौरान उद्दीपन की दशाओं में परिवर्तन होने से भी विस्मरण की क्रिया सम्पन्न होती है। उदाहरणार्थ – एक कक्षा में पढ़ाया जाना तथा दूसरी कक्षा में परीक्षा लेना कई बार विस्मरण को बढ़ावा देता है।

4) **सोद्देश्य विस्मरण–** हम जिन तथ्यों को पसन्द नही करते उनको भूलने का प्रयत्न करते है। व्यक्ति कई बार कह देता है 'मैं भूल गया।'

5) **असामान्य विस्मरण–** विस्मरण के सिद्धान्तों की असामान्य दशायें एमनीशिया अर्थात स्मरण क्षति है। मानसिक आघात के कारण अतीत के अनुभव विस्मृत हो जाते है।

15.9 विस्मरण के कारण

विस्मरण को प्रभावित करने वाले कारण इस प्रकार है।

1. **विषय का निरर्थक–** जो विषय सामग्री निरर्थक होती है। उसका सम्बन्ध पूर्व अनुभवों से स्थापित नही हो पाता। निरर्थक विषयों का उपयोग हमारे दैनिक जीवन में किसी भी कार्य की सिद्धि नही करता।

2. **समय का प्रभाव–** समय के साथ विस्मृति की मात्रा बढ़ती चली जाती है। बड़े लोग कई बार यह कहते सुने जाते है कि उनकी स्मरण शाक्ति क्षीण होती चली जाती है। हैरिस का विचार है कि किसी समय से सीखे गये अनुभव कालान्तर में परीक्षण करने पर विस्मृत जान पड़ते है।

3. **बाधक क्रिया और उसका प्रभाव–** इस मत के अनुसार नवीन अनुभव प्राचीन संस्कारों के प्रत्यास्मरण में बाधा पहुँचाते है। इसका कारण बताते हुए कहा गया है कि विस्मृति एक सक्रिय मानसिक क्रिया है अनुभवों में बाधा पहुँचाने से अनुभवों की विस्मृति हो जाती है।

4. **दमनः–मनोविश्लेषण–** वादियों के अनुसार विस्मरण का मुख्य कारण दुखद अनुभव है। मनुष्य का स्वभाव है कि वह सुखद अनुभवों का स्मरण करता है और दुखद अनुभवों का विस्मरण करने का प्रयत्न करता है। यह क्रिया दमन कहलाती है।

5. **अभ्यास की न्युनता –**भनिडाइक ने विस्मरण का कारण अभ्यास का अभाव बताया है। बार–बार किया गया अभ्यास स्मरण में सहायक होता है। अभ्यास के अभाव में विस्मरण को प्रश्रम मिलता है।

6. **संवेगो की उत्तेजना–** संवेगात्मक स्थिति में व्यक्ति भूल जाता है। सामान्तया गुस्से से व्यक्ति की आंगिक चेष्टाएं प्रबल हो जाती है और वह जो कुछ कहना चाहता है, उसके विपरीत और कहना आरम्भ कर देता है।

7. **मानसिक आघात –**कभी–कभी मानसिक आघात के कारण स्मृति पूर्णरूपेण ही समाप्त हो जाती है। उस समय तक अर्जित अनुभवों का समापन हो जाता है। साथ ही यदि मस्तिष्क में चोट कम लगती है तो विस्मरण का प्रभाव पड़ता है।

8. **मादक द्रव्य –** मादक द्रव्य का सेवन करने वाले व्यक्तियों की स्मरण शक्ति क्षीण हो जाती है।

9. **अधिगम की विधियाँ** :– अध्यापक यदि शिक्षण विधियों का प्रयोग छात्रों के स्तरानुकूल नहीं करता है तो विस्मरण को बढावा मिलता है।

10. **क्रमहीनता :–**यदि कोई अधिगम सामग्री निश्चित क्रम के अनुसार नही स्मरण की जाती तो उसकी विस्मृति के अवसर बढ़ जाते है।

15.10 विस्मरण का निराकरण

विस्मरण के निराकरण के लिए सामान्यतः इन सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए।

1. **अवधान केन्द्रित करना–** अधिगम विषय पर गहन ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए।

2. **साहचर्य–** जो अनुभव पहले से अर्जित किये जा जुके है, नवीन ज्ञान तथा अनुभवों के साथ उसका साहचर्य सम्बन्धित किया जाये। इसके साथ ही अनके प्रतिमाओं जैसे दृश्य, श्रव्य, संवेदनशील, सम्प्रक, मुक्त का निर्माण किया जाए।

3. **लय तथा पाठ–** स्मरण का मुख्य निर्माण अंग लय तथा पाठ है। पाढय सामग्री की प्रकृति के अनुसार लय तथा पाठ का उपयोग शिक्षक को करना चाहिए।

4. **समय विभाजन–** पाठन सामग्री की प्रकृति के अनुसार स्मरण करने के लिए समय का विभाजन कर देना चाहिए।

5. **विश्राम**– प्रत्येक विषय को याद कर लेने के पश्चात अध्यापक को चाहिए कि वह छात्रों को विश्रात दे। इस प्रकार प्रष्ठोन्मुख अवरोध दूर किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

ख) अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों की तुलना कीजिए–

5) विस्मरण से आप क्या समझते है ?

....

....

6) बच्चें पाठ्य सामग्री को शीध्र क्यों भूल जाते है ? कारण लिखिए।

....

....

....

7) विस्मरण दूर करने के कुछ उपाय लिखिये ?

....

....

....

15.11 चिन्तन

मानव को अपनी इच्छाओं या लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अनेक प्रयत्न करने पड़ते है। कभी–कभी व प्रयत्न बिना किसी बाधा के पूर्ण हो जाते है और कभी–कभी इन बाधाओं पर विजय प्राप्त करने के लिए विचार करना पड़ता है। विचार या चिन्तन मनुष्यों की विशेषता है। डेकार्ट ने मनुष्य तथा पशुओं का अन्तर बताते समय कहा है कि चूंकि व्यक्ति विचार करता है इसीलिए वह पशुओं से श्रेष्ठ है। चिन्तन को समस्या समाधान की ओर उन्मुख होने वाली मानसिक प्राक्रिया के रूप में भी स्वीकार किया जाता है। चिन्तन के द्वारा व्यक्ति अपनी विभिन्न समस्याओं का समाधान करता है। मनोवैज्ञानिकों ने चिन्तन को एक जटिल प्रक्रिया माना है। विभिन्न मर्नाषियों ने चिन्तन को भिन्न–भिन्न शब्दों में परिभास्ति किया है।

रॉस के अनुसार – "चिन्तन ज्ञानात्मक वक्ष की मानसिक क्रिया है।"

वेलेन्टाइन के शब्दों में – "चिन्तन शब्द का प्रयोग उस क्रिया के लिए किया जाता है, जिसमें श्रॅखलाबद्ध विचार किसी लक्ष्य अथवा उद्‌देश्य की ओर प्रवाहित होते है।

15.11.1 चिन्तन की विशेषताए –

चिन्तन की प्रमुख विशेषताए निम्नलिखित है।

1. चिन्तन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है जिसमें अनेक सरल मानसिक प्रक्रियाएँ निहित रहती है।
2. चिन्तन का आरम्भ किसी समस्या, कठिनाई, असन्तोष अथवा इच्छा के उत्पन्न होने पर होता है।
3. चिन्तन के फलस्वरूप व्यक्ति की समस्या का समाधन होता है।

4. चिन्तन स्थूल से सूक्ष्म की ओर होता है।
5. चिन्तन उद्देश्यपूर्ण होता है, इसीलिए इसका अभिप्रेरणा से प्रभावित होना स्वाभाविक है।
6. चिन्तन व्यक्ति को क्रियाशील बनाता है।
7. चिन्तन में पूर्वानुभवों का उपयोग निहित रहता है।
8. चिन्तन वातावरण के साथ व्यक्ति की अन्तक्रिया का एक पक्ष है।
9. चिन्तन व्यक्ति के व्यवहार के अन्य पक्षों से भी सम्बन्धित है।

15.11.2 चिन्तन प्रक्रिया –

चिन्तन प्रक्रिया को निम्नलिखित पाँच सोपनो में विश्लेषित करके समक्षा जा सकता है।

(क) **किसी लक्ष्य की ओर उन्मुख होना–** व्यक्ति के सम्मुख जब कोई समस्या उत्पन्न होती है तब वह उस समस्या का समाधान करने के लिए चिन्तन करता है। चिन्तन लक्ष्य समस्या को दूर करना होता है।

(ख) **लक्ष्य प्रात्ति के लिए प्रयास करना–** चिन्तन में व्यक्ति अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत रहता है। उसका प्रयास होता है कि शीघ्रातिशीध्र समस्या का समाधान हो जाये।

(ग) **पूर्व अनुभवों का स्मरण करना–** चिन्तन में व्यक्ति अपने पुराने अनुभवों को पुनः स्मरण करता है जिससे उनके आधार पर वह वर्तमान समस्या का समाधान करने में समर्थ हो सके।

(घ) **पूर्व अनुभवों को वर्तमान समस्या से संयोजित करना–** जब व्यक्ति अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर वर्तमान समस्या का समाधान खोजने का प्रयास करता है तब उसके सम्मुख समस्या के अनेक संभावित समाधान उपस्थित होने लगते है।

(ङ) **समाधान की सार्थकता देखना–** यह चिन्तनकर्ता के मस्तिष्क के सम्बन्ध में कई समाधान प्रस्तुत हो जाते है वह उनमें से किसी एक समाध ाान का चयन करता है तथा उसे व्यवहारिक रूप देकर समस्या के समाध ाान में उसकी सार्थकता प्रमाणित करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

ख) अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों की तुलना कीजिए–

8) चिन्तन की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

....

....

....

9) सामान्यतः एक व्यक्ति चिंतन करते समय किन प्रक्रियाओं का सहारा लेता है?

....

....

....

15.11.3 चिन्तन के प्रकार–

चिन्तन मुख्यतः तीन प्रकार का होता है–

1. **प्रत्यक्षात्मक चिन्तन –** यह सर्वाधिक निम्न स्तर का चिन्तन है जो प्रायः छोटे बालकों तथा पशुओं में पाया जाता है। इस प्रकार चिन्तन का मुख्य आध ार संवेदना तथा प्रत्यक्षीकरण से प्राप्त प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। इस प्रकार के चिन्तन में भाषा अथवा संकेतों का प्रयोग नही किया जाता है। यह चिन्तन किसी प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित घटना पर आधारित होता है। उदाहरणार्थ एक बार अग्नि से जल जाने वाला बालक पुनः अग्नि को देखता है और सोच लेता है कि अग्नि के पास जाने पर मैं जल जाउँगा।

2. **कल्पनात्मक चिन्तन–** कल्पनात्मक चिन्तन का आधार मानसिक प्रतिमाएं होती है। इस प्रकार के चिन्तन में कोई वस्तु अथवा परिस्थिति प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित नही होती है अर्थात इसमें प्रत्यक्षीकरण का अभाव होता है। इसमें व्यक्ति उद्दीपक के सम्मुख न होने पर भी स्मृति के आधार पर भविष्य के विषय में सोचता है।

3. **प्रत्यात्मक चिन्तन –** यह चिन्तन का सर्वोच्च रूप है। इस प्रकार के चिन्तन में पूर्व निर्मित प्रत्ययों के आधार पर प्राणी चिन्तन करता है। इस

प्रकार के चिन्तन में भाषा तथा संकेतों का प्रयोग किया जाता है। प्रत्यात्मक चिन्तन एक अत्यंत जटिल मानसिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति पुराने अनुभवों के आधार पर अपनी वर्तमान समस्या का सूक्ष्मतम विश्लेषण करता है तथा उसके सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है।

15.12 चिन्तन प्रभावक तत्व

चिन्तन पर अनेक प्रतिकारकों का प्रभाव पड़ता है, में प्रतिकारक इस प्रकार है।

1. **सशक्त प्रेरणा–** प्रेरणा के अभाव में सशक्त एवं व्यवस्थित चिन्तन सम्भव नही है। चिन्तन के द्वारा किसी समस्या का समाधान खोजा जाता है। अतः प्रेरणा किसी समस्या के समाधान के लिए जितनी अधिक शक्ति का संचालन करेगी, चिन्तन उतना ही अधिक सशक्त होगा।
2. **लगन तथा रूचि–** समस्या के समाधान में हमारी रूचि तथा क्रिया का प्रमुख योग है। समस्या उपस्थित होने पर रूचि, लगन, अवधान आदि लक्षण सभी साथ–साथ काम करते हैं।
3. **सर्तकता एवं लचीलापन–** सर्तकता तथा लचीलापन हमें रूढ़िवादी विचारों और असफल क्रिया विधियों से उकसाकर उपयुक्त तथा नवीन सांकेतिक विधियों का समस्या पूर्ति में उपयोग करने योग्य बनाते हैं।
4. **बुद्धि–** कुछ विद्वानों ने चिन्तन की क्रिया तथा बुद्धि को एक ही माना है। बुद्धि चिन्तन की अभियोग्यता है। बुद्धिमान व्यक्ति अच्छा चिन्तन कर सकते है। चिन्तन में अन्तदृष्टि तथा पश्चात दृष्टि, बुद्धि के क्षेत्र में व्यापकता होने पर सहायक होती है।
5. **समय–सीमा अवधि–** चिन्तन में समय लगता है। यदि समस्या समाधान किया जा रहा है तो उस समय की सीमा अवधि कठोर नही होनी चाहिए।

15.13 चिन्तन का शैक्षिक महत्व

सफल जीवन के लिए चिन्तन अत्यन्त आवश्यक है। यह व्यक्ति की वह मानसिक क्रिया है जो उसे अन्य व्यक्तियों से श्रेष्ठ बनाती है। शैक्षिक अथवा व्यावसायिक क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करने में व्यक्ति की चिन्तन शक्ति का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। अतः अध्यापकों को बालकों की चिन्तन शक्ति को विकसित करने के लिए यथासम्भव प्रयास करने चाहिए। प्रत्यक्षीकरण, विस्तृत

अनुभव, प्रत्यय निर्माण, भाषा विकास, विचार अभिव्यक्ति आदि को प्रोत्साहित करके अध्यापक बालकों की चिन्तन शक्ति के विकास में सहायता कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) नीचे दिये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिए।

ख) अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों की तुलना कीजिए–

10) चिन्तन कितने प्रकार का होता है?

....

....

....

11) चिन्तन को कौन कौन से कारक प्रभावित करते हैं?

....

....

....

15.14 सारांश

स्मृति पूर्व में सीखे गये अनुभवों को मस्तिष्क में बनाये रखना की क्षमता होती है। स्मृति एक जटिल प्रक्रिया है। जिसमें सीखना, धारण शक्ति, पुनस्मृर्ति व पहचान इसकी प्रमुख प्रक्रियायें है। कोई भी सामग्री मस्तिष्क में तभी संचित हो सकती है जबकि स्मृति की समस्त प्रक्रियायें ठीक प्रकार से कार्य कर रही हो। किसी व्यक्ति की स्मरण क्षमता तभी अच्छी कही जा सकती है जबकि वह विषय सामग्री को जल्दी याद कर ले व मस्तिष्क में धारण करते हुये आवश्यकता पड़ने पर शीघ्र याद करे पहचान ले। एक व्यक्ति की स्मृति क्षमता दूसरे से भिन्न होती है, इसके लिये वह कारक उत्तरदायी है जोकि स्मृति को प्रभावित करते हैं।

स्मृति का ऋणात्मक पक्ष विस्मरण है। विस्मरण क्यों होता है इस सम्बन्ध में अलग–अलग मनोवैज्ञानिकों ने अपने सिद्धान्त बताये हैं। विषय सामग्री पर ध्यान देना, साहचर्य नियमों का पालन करना, समय चक्र विभाजन आदि पर ध्यान देने से विस्मरण को रोका जा सकता है।

चिन्तन का प्रारम्भ तब होता है जबकि व्यक्ति के सामने कोई समस्या आ

जाती है। समस्या आने पर व्यक्ति उस समस्या को दूर करने का प्रयास करता है। जिसमें व्यक्ति पूर्व में प्राप्त अनुभवों को वर्तमान अनुभवों से जोड़ता है। जिससे वह समस्या का समाधान कर सके। प्रत्यक्षात्मक चिन्तन, कल्पनात्मक चिंतन, प्रत्यात्मक चिंतन, चिंतन के ही विभिन्न प्रकार है। व्यक्ति की बुद्धि क्षमता, रूचि, प्रेरणा आदि कई कारक चिंतन क्षमता को प्रभावित करते हैं। अतः एक अध्यापक का यह प्रयास होना चाहिए कि अपने विद्यार्थियों में चिंतन शक्ति का सही विकास कर सके।

15.15 अभ्यास कार्य

1. धारणा शक्ति को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कीजिए।
2. विस्मरण के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना करें।
3. एक अध्यापक के रूप में बच्चों की चिंतनशक्ति को विकसित करने के लिये आप क्या कर सकते हैं, लिखिए।

15.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. स्मृति एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति पूर्व में सीखी गयी विषय वस्तु को वर्तमान समय में चेतन में लाता है।
2. – सीखना
   – धारणा
   – पुनर्स्मृति
   – पहचान
3. – शीघ्र अधिगम
   – उत्तम धारण शक्ति
   – शीघ्र प्रत्यास्मरण
   – शीघ्र पहचान
4. – मानसिक अवस्था
   – प्रेरण शक्ति
   – सामग्री की सार्थकता
   – शारीरिक स्थिति

– सीखने की विधि

5. पूर्व में सीखी गयी सामग्री को पुनः स्मरण करने में असमर्थता।

6. – विषय सामग्री की निरर्थकता

– समय

– नवीन अनुभवों का संचयन

– अभ्यास की कमी

– संवेगात्मक प्रभाव

– अधिगम की त्रुटिपूर्ण विधियां आदि

7. जो कारक विस्मरण लाते है उन कारकों का निराकरण करना। साथ ही ध्यान केन्द्रण पर बल देते हुए, साहचर्य के नियमों आदि का पालन करते हुए विस्मरण दूर किया जा सकता है।

8. – समस्यात्मक परिस्थिति होने पर चिंतन का प्रारम्भ होना

– स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ना

– चिंतन उद्देश्यपूर्ण होता है

– व्यक्ति को सक्रिय बनाता है।

9. – लक्ष्य की ओर उन्मुखी व्यवहार

– लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करना

– पूर्व अनुभवों से लाभ उठाना

– सही समस्या समाधान पर चिंतन करना

10. – प्रत्यक्षात्मक चिंतन

– कल्पनात्मक चिंतन

– प्रत्यात्मक चिंतन

11. – प्रेरणा की मात्रा

– रूचि

– सर्तकता व लचीलापन

– बौद्धिक क्षमता

15.17 कुछ उपयोगी पुस्तकें

सिंह, ए0के0 (1994) : शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन पटना।

गुप्ता, एस0पी0 एवं गुप्ता, अलका (2002) शिक्षा मनोविज्ञान शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

इकाई 16 विशिष्ट बालकों की शिक्षा

संरचना

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 विशिष्ट बालका का अर्थ

16.4 विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण

16.5 शारीरिक विकलांग बालक

16.5.1 दृष्टि विकलांगता

16.5.2 श्रवण विकलांगता

16.5.3 वाणी दोष

16.5.3 अस्थि विकलांगता

16.6 मानसिक रूप से विशिष्ट बालक

16.6.1 प्रतिभाशाली बालक

16.6.2 मानसिक मंद बालक

16.7 शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालक

16.7.1 शैक्षिक पिछडे बालक

16.7.2 सीखने में अक्षम बालक

16.8 सामजिक रूप से विशिष्ट बालक

16.8.1 बाल–अपराधी

16.8.2 मादक–द्रव्य व्यसनी

16.9 सारांश

16.10 अभ्यास कार्य

16.11 बोध प्रश्नो के उत्तर

16.12 कुछ उपयोगी पुस्तके

16.1 प्रस्तावना

इस ईकाई में हम विशिष्ट बालक का प्रत्यय तथा विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालकों के बारे में विस्तृत परिचर्चा करेंगे। साथ ही आपको विभिन्न प्रकार

के विशिष्ट बालको की शिक्षा व्यवस्था से भी अवगत करायेगे। किसी भी राष्ट्र का विकास उसके संसाधनो का सही प्रकार से उपयोग पर ही निर्भर करता है। मानवीय संसाधनो का तात्पर्य है कि प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ होने के साथ—साथ व्यक्तिगत विभिन्नताओ को ध्यान मे रखते हुये उसे शिक्षण तथा प्रशिक्षण दिया जाए जिससे उनकी समस्त क्षमताओ और योग्यताओं का ठीक प्रकार से प्रयोग कर राष्ट्र के विकास मे योगदान लिया जा सके।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात, आप :

- विशिष्ट बालको का अर्थ समझकर परिभाषित कर सकेंगे।
- विशिष्ट बालको एवं सामान्य बालको में अन्तर कर सकेंगे।
- विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालको की व्याख्या कर सकेंगे।
- विशिष्ट शिक्षा के प्रत्यय को समझ सकेगे।
- विशेष शिक्षा देने मे आने वाली कठिनाईयो से अवगत हो सकेगे।

16.3 विशिष्ट बालक का अर्थ

विशिष्ट बालको को जानने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि सामान्य बालक किसे कहते है। विद्यालय में हर समाज, हर वर्ग तथा भिन्न—भिन्न परिवारो से बालक आते है ये सभी विभिन्न होते हुये भी सामान्य कहलाते है। परन्तु कुछ ऐसे भी होते है तो शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक एवं सामाजिक गुणो की दृष्टि से अन्य बालको से भिन्न होते है। सामान्य बालक वे होते है जिनका शारीरिक स्वास्थ एवं बनावट इस प्रकार की होती है कि उन्हे सामान्य कार्य करने मे किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नही होता है। जिनकी बुद्धि लब्धि औसत (90 से 110) के बीच होती है। ऐसे बालको की शैक्षिक उपलब्धि कक्षा के अधिकांश बालको के समान होती है।

क्रूशैंक के अनुसार—"एक विशिष्ट बालक वह है, जो शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक रूप, सामान्य बुद्धि एवं विकास की दृष्टि से इतने अधिक विचलित होते है कि नियमित कक्षा— कार्यक्रमो से लाभान्वित नही हो सकते है तथा जिसे विद्यालय में विशेष देखरेख की आवश्यकता होती है।"

बोध प्रश्न

1. सही उत्तर पर निशान लगाइये

(क) विशिष्ट बालक शारीरिक, मानसिक संवेगात्मक रूप से सामान्य बालको से भिन्न होते है।

(ख) विशिष्ट बालक नियमित कक्षाओं से लाभान्वित होते है।

(ग) विशिष्ट बालक प्रत्येक परिवार में पाये जा सकजे है।

(घ) विशिष्ट बालको के अन्दर छिपे हुये गुणो का पता लगाना कठिन है।

16.4 विशिष्ट बालको का वर्गीकरण

विशिष्ट बालक सामान्य बालको से भिन्न होते है। विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालक आपस में भी एक दूसरे से भिन्न होते है। ये भिन्न बौद्धिक योग्यताओं में, शारीरिक योग्यताओ मे या शैक्षिक उपलब्धि मे हो सकते है।

मुख्य रूप से सभी प्रकार के विशिष्ट बालको को चार वर्गो मे विभाजित किया है।

विशिष्ट बालक

शारीरिक रूप से विशिष्ट	मानसिक रूप से विशिष्ट	शैक्षित रूप से विशिष्ट	सामाजिक रूप से विशिष्ट
1) दृष्टि विकलांग बालक	1) प्रतिभा सम्पन्न बालक	1) शैक्षिक व्रीव बालक	1) कुसमायोजित बालक
2) वाणी विकलांग बालक	2) सृजनात्मक बालक	2) शैक्षिक रूप से पिछड़े बालक	2) समस्यात्मक बालक
3) श्रवण दुर्बल बालक	3) मानसिक मंद बालक	3) सीखने मे अयोग्य बालक	3) बाल अपराधी
4) गत्यात्मक अक्षम बालक			4) विचलित बालक
			5) नशे के आदी बालक
			6) संवेगात्मक रूप से विचलित बालक

16.5 शारीरिक विकलांग बालक

विकलांगों की शिक्षा हमारी लोकतात्रिक आवश्यकता है। यद्यपि विकलांगो के लिए विशेष शिक्षा और समन्वित शिक्षा की व्यवस्था की गई है लेकिन विकलांगो की संख्या को देखते हुए यह नगण्य है। विश्व विकलांग जनसंख्या के करीब 80 प्रतिशत विकलांग विकासशील देशो में रहते है। शारीरिक विकलांगता के क्षेत्र मे नेत्रहीन, मूक और बधिर, विषमांग, विरूपति, विकृत हड्डी, लूले – लगड़े आते है।

16.5.1 दृष्टि विकलांगता

दृष्टि विकलांगता मानव समाज की सबसे दुखद स्थिति है यद्यपि वर्तमान समाज मे उपयोगी अनुसंधान के परिणामस्वरूप अनेक विशेष विद्यालयों की स्थापना हुई थी। इस विकलांगता के प्रमुख कारण संक्रामक रोग, दुर्घटना या चोट, वंशानुपात प्रभाव, परिवेश का प्रभाव तथा विषैले पदार्थो का प्रयोग आता है। 60 से 70 प्रतिशत बच्चे संक्रामक रोग के कारण दृष्टिहीन होते है। दृष्टिहीन बालको को छह वर्गो का विभाजन शिक्षा की दृष्टि से उपयुक्त माना गया है।

1. जन्मजात अथवा पूर्णाध वर्ग– इस वर्ग में पांच वर्ष के पूर्णाध आते है।
2. इसमे वे पूर्णांध आते है जो 5 वर्ष के बाद दृष्टि खो बैठते है।
3. आंशिक जन्मांध वर्ग मे दृष्टि कमजोर होती है। ऐसे बालक थोड़ा बहुत देख सकते है।
4. आंशिक अंधता वर्ग में आंशिक दृष्टिहीन बालक आते है जिनकी दृष्टि किसी विकार, रोग के कारण किसी भी आयु मे कमजोर हो जाते है।
5. आंशिक जन्मजात दृष्टि वर्ग के बालक केवल नाममात्र ही देख पाते है।
6. आंशिक दृष्टि वर्ग के बालक किसी कारण से सामान्य दृष्टि खो देते है।

16.5.2 श्रवण विकलांगता –

शारीरिक विकलांगता के अन्तर्गत दूसरा महत्वपूर्ण वर्ग मूक – बधिर विकंलागो का है। इसके अन्तर्गत वे बालक आते है जो किसी कारण से पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से सुनने मे असमर्थ होते है। ये वंशानुक्रम या वातावरण किसी भी कारण से हो सकता है।

श्रवण दोष के कारण

जन्म से पूर्व के कारण	जन्म के बाद के कारण	जन्म के समय के कारण
1.माँ को संक्रामक रोग होना	1.दुर्घटना से विशेष अंग का नष्ट होना	1.समय से पूर्व जन्म का होना
2. तेज दवाओ का सेवन	2. त्रीव आवृति वाली ध्वनि मे रहना	2. जन्म के बाद आक्सीजन की कमी
3. नशीले पदार्थो का प्रयोग	3 संक्रामक रोग जो श्रवण क्षमता को प्रभावित करते है	3. प्रसव के समय किसी उपकरण का रह जाना
4. कुपोषण		4. जन्म के तुरन्त बाद पोलियो होना
5. रहन –सहन की दशाएं		

श्रवण दोष बालको की पहचान– इस प्रकार के बालको को पहचानने

के लिए निम्नलिखित विधियो का उपयोग करते है।

1. **विकासात्मक पैमाना** – इसमे संवेदी गामक यंत्र के संदर्भ मे बालक के वर्तमान स्तर का पता लगाकर उसकी श्रवण विकलांगता का पता लगाते हैं।
2. **चिकित्सीय परीक्षण** – इसमे बालक के श्रवण अंगों की क्रियाशीलता तथा निष्क्रियता की जांच करके श्रवण क्षमता का पता लगाया जाता है।
3. **जीवन इतिहास विधि** – इसमे श्रवण दोष युक्त बालक के जीवन विवरण का पता लगाकर, उसके स्वास्थ्य–इतिहास, विकास का इतिहास तथा पारिवारिक पृष्ठभूमि को जानकर यह पता लगाने का प्रयास किया जाता है कि श्रवण – दोष अनुवांशिक है अथवा अर्जित है।
4. **क्रमबद्ध निरीक्षण –** इसमे माता पिता अथवा शिक्षक द्वारा बालक के व्यवहार का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाता है और बालक के असामान्य व्यवहार का पता लगाया जाता है।

श्रवण बाधित की शिक्षा व्यवस्था– ऐसे बालक कक्षा मे ठीक प्रकार से समायोजित नही हो पाते है अतः इन्हे निम्न लिखित साधनो का प्रयोग करना चाहिए।

1. श्रवण यंत्र का प्रयोग करना चाहिए।
2. आत्म विश्वास को विकसित करने के लिए नर्सरी शिक्षा देनी चाहिए।
3. एक स्वर को दूसरे स्वर से भिन्न करने के लिए श्रवण प्रशिक्षण देना चाहिए।
4. इनके लिए कक्षा व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि इन्हे आगे की पंक्ति में बैठाया जाए।
5. शिक्षक को भी उच्च स्वर मे बोलना चाहिए तथा इस प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिए कि छात्र शिक्षक के होठों को ठीक प्रकार देख सके।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखे।

ख) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की मिलान कीजिए।

2) दृष्टि विकलांगता का वर्गीकरण दीजिए।

....

....

3) श्रवण दोष बालको की शिक्षा व्यवस्था कैसी होनी चाहिए ?

....

....

14.5.3वाणी दोष –

वाणी दोष सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। वाणी दोष में सुनने वाला व्यक्ति, क्या कहा है, इस पर ध्यान न देकर किस प्रकार कहा जा रहा है, इस पर ध्यान देता है और श्रोता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। इससे श्रोता एवं वक्ता दोनो ही परेशान होते है। वाणी दोष के अन्तर्गत दोषपूर्ण उच्चारण, दोषपूर्ण स्वर, अटकना एवं हकलाना, देर से वाणी विकास आदि आता है।

वाक विकलांगता के कारण – वाक विकलांगता का कारण श्रवण – क्षमता में कमी या उसका विकारयुक्त होना है। कान के रोग के कारण यह विकृति आती है। मस्तिष्क पर चोट लग जाना, तालु कण्ठ, जीभ, दांत आदि में किसी प्रकार की विकृति के कारण यह विकलांगता आ जाती है। वातावरण के कारण भी यह विकार आ जाता है। वाणी विकार अनुकरण के आधार पर भी होता है। यदि बालक के वातावरण मे किसी प्रकार का दोष होता है तो वह इन दोषो को अपना लेता है जैसे शब्दो का उच्चारण, उतार – चढाव, चेहरे के भाव इत्यादि अनुकरण द्वारा सीखे जाते है।

वाक् विकलांगो का वर्गीकरण –

1. आंगिक विकृति
2. सामान्य वाक् विकृति
3. मानसिक वाक् विकृति
4. विशेष वाक् विकृति

वाक् – विकृति को दूर करने तथा वाक् विकास के लिए निम्नलिखित बातो को ध्यान मे रखकर वाक् – विकलांगो की शिक्षा को महत्वपूर्ण माना जाता है।

1. वाक् – ध्वनि के शुद्ध एवं स्पष्ट टेप – रिकार्डर रखना।
2. वाक् – विकृति का समुचित संग्रह करना।
3. बालक को स्वस्थ तथा मनोरम वातावरण मे रखना।
4. बालक के मुक्त विकास के लिए विद्यालय के वातावरण को सहज एवं स्वभाविकता प्रदान करना।
5. वाक् – दोषी बालक को मौखिक अभिव्यक्ति के अधिक अवसर प्रदान करना।

16.5.4 अस्थि विकलांगता–

अस्थि विकलांग बालक वे होते है, जिनकी मांसपेशियो, अस्थि व जोड़ो

मे दोष या विकृति होती है जिससे वह सामान्य बालको की तरह कार्य नही कर पाते है और उन्हे विशेष सेवाओ, प्रशिक्षण, उपकरण, सामग्री तथा सुविधाओ की आवश्यकता होती है। इसमे पोलियोग्रस्त, Crippled आदि आते है।

अस्थि विकलांगता के कारण –

वंशानुगत कारक – इसमे विकलांगता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होती है जोकि कार्यकुशलता मे बाधा उत्पन्न करती है।

1. जन्मजात कारक – ये जन्म के समय के कारक होते है। इसमे गर्भावस्था में कुपोषण संक्रामक रोग, मां का दुर्घटना ग्रस्त होना प्रमुख है जिसके कारण बालक में अस्थिदोष उत्पन्न हो जाते है।
2. अर्जित कारक – इसमे वे कारक आते है जो जन्म के पश्चात किसी प्रकार के दोष उत्पन्न करते है। इसके किसी प्रकार की दुर्घटना, बीमारियाँ जैसे पोलियों या अन्य बीमारी के लम्बे समय तक रहने पर होती है।

अस्थि विकलांग बालको की शिक्षा –

1. ऐसे बालको के शिक्षक को विशेष ध्यान देना चाहिए तथा उनके बैठने के लिए उचित फर्नीचर की व्यवस्था करनी चाहिए।
2. इन बालको के लिए एक स्थान पर बैठकर खेले जाने वाले खेलो का आयोजन होना चाहिए।
3. इन बालकों के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण व निर्देशन दिया जाना चाहिए। इनकी आवश्यकता के अनुसार इन्हे व्यवसाय उपलब्ध कराने चाहिए।
4. ऐसे बालकों को कृत्रिम अंग उपलब्ध कराये जाने चाहिए।
5. शिक्षको को इन बालको की सीमाओ को देखते हुये क्रियाए आयोजित की जानी चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :क) नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखे।

ख) इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर की मिलान कीजिए।

4) वाणी दोष बालको की पाँच विशेषताए लिखिए।

....

....

5) अस्थि विकलांग बालको की मुख्य शैक्षिक आवश्यकताए लिखें।

....

....

16.6 मानसिक रूप से विशिष्ट बालक

इसमें प्रतिभाशाली, मानसिक मंद एवं सृजनात्मक बालक आते है।

16.6.1 प्रतिभाशाली बालक –

प्रतिभाशाली बालक वे बालक होते है जिनकी बौद्धिक क्षमताए सामान्य बालको की अपेक्षा अधिक होती है। ये जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे विशिष्ट प्रदर्शन करते है। टरमेन के अनुसार ऐसे बालको की बुद्धिलब्धि 140 से ऊपर होती है जबकि मिल के अनुसार 190 से 200 बुद्धि – लब्धि वाले बालक प्रतिभाशाली होते है। विटी के अनुसार प्रतिभाशाली बालक संगीत, कला, सामाजिक नेतृत्व तथा दूसरे विभिन्न क्षेत्रो मे अच्छा प्रदर्शन करते है।

प्रतिभाशाली बालको की पहचान

- परीक्षण के आधार
  - 1. बुद्धि परिक्षण
    - अ) मौखिक बुद्धि परीक्षण
    - ब) अमौखिक बुद्धि परीक्षण
    - स) क्रियात्मक बुद्धि परीक्षण
  - 2. उपलब्धि परीक्षण
  - 3. व्यक्तित्व परीक्षण
  - 4. अभियोग्यता परीक्षण
- शिक्षक निरीक्षण के आधार पर
  - कक्षा व्यवहार का निरीक्षण
  - कक्षा के बाहर का निरीक्षण
- अभिलेखो के आधार पर
  - 1.संचयी अभिलेख
  - 2.स्थानान्तरण प्रमाणपत्र अभिलेख
  - 3.स्वास्थ्य अभिलेख
  - 4.निर्देशन एवं परामर्श अभिलेख
  - 5.मासिक प्रगति अभिलेख

प्रतिभाशाली बालको की पहचान बुद्धि परीक्षण के आधार पर की जाती है। यह वैयक्तिक तथा सामूहिक परीक्षण द्वारा होता है। वैयक्तिक और सामूहिक बुद्धि परीक्षण मौखिक, अमौखिक तथा क्रियात्मक होते हैं। इसके अतिरिक्त उपलब्धि परीक्षणों की सहायता से यह पता लगाया जाता है कि बालक ने विभिन्न विषयो मे सिखायी जाने वाली कुशलताओ मे ठीक प्रकार से सफलता प्राप्त की है अथवा नही।

शिक्षक के निरीक्षण द्वारा बालक का व्यवहार, रूचियों, योग्यताओ, क्षमताओ का ज्ञान प्राप्त कर प्रतिभाशाली बालको की पहचान की जाती है।

विभिन्न प्रकार के अभिलेखो के आधार पर किसी भी विद्यार्थी की प्रतिभा को पहचाना जा सकता है। इसमे मुख्य रूप से संचयी अभिलेख, स्थानान्तरण

अभिलेख, स्वास्थ्य अभिलेख, निर्देशन और परामर्श अभिलेख, मासिक प्रगति अभिलेख उपाख्यान संबधी अभिलेख है।

प्रतिभाशाली बालको के शिक्षण के प्रमुख उपागम – प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा एक आसान कार्य नही है क्योकि यह संख्या मे कम होते है और समूह विजातीय होता है। अतः पूरे समूह पर किसी एक प्रणाली को लागू करना कठिन कार्य है। प्रतिभाशाली बालको के शिक्षण के प्रमुख तीन उपागम है।

1. त्वरण
2. सामान्य कक्षाओं मे समृद्धि
3. विशिष्ट कक्षाए

त्वरण – इसमे प्रतिभाशाली बालको को उनकी शारीरिक आयु की अपेक्षा मानसिक आयु के आधार पर प्रवेश दिया जाता है। ऐसे बालको को विद्यालय में शीघ्र प्रवेश दिया जाता है। हावसन के अनुसार ऐसे बालक आठवी कक्षा या उसके बाद अधिक अच्छी प्रगति दिखाते है।

समृद्धिकरण – समृद्धिकरण का तात्पर्य है कि नियमित कक्षाओ मे दिये जाने वाले पाठ्यक्रम मे शैक्षिक अनुभव अधिक देकर उसे समृद्ध बनाया जाना। प्रतिभाशाली बालको के समुचित विकास के लिए पाठ्यक्रम इतना कठिन होना चाहिए कि उसे पढ़ना बालक के लिए एक चुनौतिपूर्ण हो।

विशिष्ट कक्षाएं – इनमे सामान्य विद्यालायो मे ही विशेष कक्षाए आयोजित कर विशेष रूप से नियोजित पाठ्यक्रमो को प्रस्तुत किया जाता है। विशिष्ट प्रतिभावान व्यक्तियों को बुलाकर उनके अनुभवो से छात्रो को लाभान्वित करवाया जाता है।

16.6.2 मानसिक मंद बालक

मानसिक मंदता एक ऋणात्मक संकल्पना है। मानसिक रूप से मंद बालक घर, समाज तथा विद्यालय का कार्य नही कर पाते हैं।

डॉल ने 1941 में मानसिक मंदता की पहचान के लिए 6 प्रमुख बाते बतायी हैं।

1. जब बालक सामाजिक परिस्थितियों के साथ समायोजन न कर सके।
2. जब बालक अपने साथियों के साथ मित्रवत व्यवहार न कर सके।
3. जब व्यवहारिक तथा वातावरण सम्बन्धी कारणों से उसका मानसिक

विकास न हो सके।

4. जब बालक उतना कार्य न कर सके जितना उस आयु के लोगों से आशा की जाती है।

5. विशेष शारीरिक दोष के कारण वह सामान्य कार्य न कर सके।

6. जब बालक में कुछ ऐसे दोष हो जिन्हें परिष्कृत नही किया जा सकता है।

अमेरिकन एसोसिएशन ऑन मेण्टल डेफिशिएन्सी (1959) के अनुसार मानसिक मंदता में सामान्य बौद्धिक प्रकार्य सामान्य से कम स्तर के होते हैं। मानसिक मंदता की उत्पत्ति विकासात्मक अवस्थाओं में होती है और समायोजित व्यवहार को क्षति पहुंचाने से भी यह सम्बन्धित है।

मानसिक मंदता का वर्गीकरण

शारीरिक अवस्था के आधार पर	**मंदता की मात्रा पर**	**दूसरों पर आश्रित रहने पर**	**बुद्धिलब्धि पर**
(1) मस्तिष्क आघात	(1) साधारण मानसिक मंदता	(1) स्वतंत्र	(1) शिक्षा प्राप्त करने वाले
(2) मंगोलायड	(2) आत्मबल मानसिक मंदता	(2) आंशिक स्वतंत्र	(2) प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले
(3) क्रेटिन बालक	(3) गम्भीर मानसिक मंदता	(3) आश्रित	(3) संवासित
(4) फेनिलकेटनयूरिया			
(5) हाइड्रोसेफेली			
(6) सेरीबल पालसी			

मानसिक मंदता के कारण

जन्म के पूर्व के कारक	**जन्म के समय के कारक**	**जन्म के पश्चात के कारक**
(1) विषैले पदार्थो का सेवन	(1) अपरिपक्व जन्म	(1) गम्भीर बीमारी
(2) दवाएं	(2) प्रसव के समय असमान्य दशाएं	(2) मानसिक आघात
(3) रेडियोधर्मिता	(3) प्रसव के समय औजारों का प्रयोग	(3) दुर्घटना
(4) माता का मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य		(4) कुपोषण
(5) जन्म के पूर्व संक्रमण		(5) वंचित वातावरण

मानसिक मंद बालकों की शिक्षा व्यवस्था– मानसिक मंद बालकों की शिक्षा व्यवस्था के लिए कुछ सिद्धान्तों को प्रयोग में लाना चाहिए।

1. मानसिक मंद बालकों के लिए मूर्त माध्यम से शिक्षा दी जानी चाहिए। डूनॉन ने अपने अध्ययनों में यह पाया कि ऐसे बालक ऐलेक्जेण्डर परफारमेन्स टेस्ट को आसानी से कर लेते हैं।
2. कक्षा का आकार छोटा होना चाहिए तथा निर्देश व्यक्तिगत होने चाहिए।
3. करके सीखने के सिद्धान्त पर शिक्षा आधारित होनी चाहिए।
4. मानसिक मंद बालकों को वास्तविक स्थान पर ले जाकर शिक्षा देनी चाहिए।
5. शिक्षण को वास्तविक जीवन पर आधारित करके करना चाहिए। विभिन्न विषयों को आपस में सहसम्बन्धित करके शिक्षा देनी चाहिए।
6. मानसिक मंद बालकों के लिए अलग से विशेष शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

6) प्रतिभाशाली बालको की पहचान के प्रमुख तीन आधार लिखिए?

....

....

....

7) बौद्धिक क्षमता के आधार पर मानसिक मंद बालकों को परिभाषित कीजिए?

....

....

....

8) प्रतिभाशाली तथा मानसिक मंद बालकों में तीन अन्तर लिखें?

....

....

....

16.7 शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालक

यहाँ पर शैक्षिक रूप से विशिष्ट बालकों के दो प्रकारों के बारे में बताया गया है।

16.7.1 शैक्षिक पिछड़े बालक–

पिछड़े बालक वह होते है जो कक्षा में किसी तथ्य को बार–बार समझाने पर भी नही समझते हैं और औसत बालकों के समान प्रगति नहीं कर पाते हैं। ये पाठ्यक्रम तथा पाठ्य सहगामी क्रियाओं में किसी प्रकार की रूचि नही लेते है। इनकी बुद्धिलब्धि सामान्य होने पर भी इनकी शैक्षिक उपलब्धि कम होती है। **बर्ट** के अनुसार "एक पिछड़ा बालक वह है जो अपने स्कूल जीवन के मध्यकाल में अपनी कक्षा से नीचे की कक्षा का काम नही कर सकते जो कि उसकी आयु के लिए सामान्य कार्य हो।" पिछड़े बालकों को तीन आधारों पर जाना जा सकता है।

1. बुद्धिलब्धि के आधार पर
2. शैक्षिक उपलब्धि के आधार पर
3. शैक्षिक लब्धि के आधार पर

शैक्षिक पिछड़ेपन के कारण –

पिछड़ेपन के कारण

व्यक्तिगत कारक   पर्यावरणीय कारक

वंशानुक्रम   शारीरिक कारक   मानसिक कारक

संवेगात्मक कारक

पारिवारिक कारक   सामाजिक कारक   विद्यालीय कारक

पिछड़े बालक की शिक्षा– पिछड़े बालकों पर यदि उचित ध्यान दिया जाता है तो वह शिक्षा में प्रगति कर सकते हैं। इसके लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

1. विशिष्ट विद्यालय
2. विशिष्ट कक्षाएं

3. सामान्य कक्षाओं में विशिष्ट प्राविधान

विशिष्ट विद्यालय– पिछड़े बालकों के लिए उनके अनुसार पाठ्यक्रम, उपयोगी सहायक सामग्री, प्रशिक्षित शिक्षकों सहित अलग से विद्यालय की स्थापना की जाए जिससे वह अपनी कमियों को कम समझ सके तथा अधिक सुरक्षा का अनुभव कर सके। यह विद्यालय आवासीय होने चाहिए।

विशिष्ट कक्षाएं– पिछड़े बालकों के लिए सामान्य विद्यालयों में विशिष्ट कक्षाएं आयोजित की जा सकती है। इन कक्षाओं में विशेष प्रशिक्षित अध्यापक नियुक्त किये जाने चाहिए। इन कक्षाओं में शिक्षक आवश्यकतानुसार पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि में परिवर्तन कर सकते है तथा इन बालकों को कठिन प्रतियोगिता का सामना नही करना पड़ेगा।

सामान्य कक्षा में विशिष्ट प्राविधान– इसमें सामान्य कक्षाओं में विशेष प्राविधान करके, उन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इन बालकों के लिए पाठ्यक्रम में लचीलापन होना चाहिए जो उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप हो। इनके लिए शिक्षकों को निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना होगा।

1. शिक्षक व्यवहारिक और अनुभवी होना चाहिए।
2. शिक्षक को मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। जिससे वह छात्रों की विशेष परेशानियों तथा कठिनाईयों को समझ सके।
3. पिछड़े बालकों में असफलता की दर अधिक होती है अतः शिक्षकों में धैर्य होना चाहिए।
4. शिक्षक को बाल–केन्द्रित शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

16.7.2 सीखने में अक्षम बालक–

सीखने में अक्षम बालक उन बालकों को कहते है जो कि मौखिक अभिव्यक्ति, सुनने सम्बन्धी क्षमता, लिखित कार्य, मूलभूत पढ़ने की क्रियाओं में, गणितीय गणना, गणितीय तर्क तथा स्पेलिंग में उनकी शैक्षिक उपलब्धि तथा बौद्धिक योग्यताओं में सार्थक विभेद दिखायी देता है। यह विभेद किसी और अक्षमता का परिणाम नही होता है। यह बालक ठीक प्रकार से सुन, सोच, बोल, पढ़ तथा लिख नही पाते है।

विशेषताएं– सीखने में अक्षम बालकों में मुख्य रूप से अति क्रियाशीलता, विलम्बित वाणी विकास पढ़ने, लिखने तथा गणित की समस्या तथा स्मृति ह्रास आदि पाये जाते है।

कारण– सीखने में अक्षमता के निम्नलिखित कारण होते है।

1. पारिवारिक कारक–

– सीखने में अक्षमता विशेष परिवारों में अधिक पायी जाती है।

– डिसलेक्सिया का प्रमुख आधार वंशानुक्रम होता है।

– यह जन्म से पूर्व, जन्म के समय तथा जन्म के बाद की समस्याओं का परिणाम होता है।

– माँ का स्वास्थ्य, खान पान तथा जीवन का तरीका

– सिर में चोट, संवेगात्मक वंचन

– केन्द्रीय स्नायुमण्डल का ठीक प्रकार से विकसित न होना आदि।

– श्रव्य गत्यात्मक समस्याएं, तथा किसी प्रकार की एलर्जी का होना।

2. मनोवैज्ञानिक कारक–

– ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थता

– खराब अनुशासन का होना

3. पर्यावरण कारक–

– स्वास्थ्य, गलत आहार तथा सुरक्षा।

– परिवार में उचित भाषा का प्रयोग न होना।

4. सामाजिक सांस्कृतिक कारक–

– विद्यालीय उपस्थिति, कार्य तथा पढ़ने की आदते

– ठीक प्रकार की शिक्षा न मिल पाना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

9) सही अथवा गलत पर निशान लगाइये।

(i) पिछड़े बालकों की बुद्धि लब्धि 90–100 होती है

(ii) पिछड़ा बालक वह है जो अपने विद्यालय जीवन के मध्य में अपनी कक्षा से नीचे की कक्षा के कार्य को न कर सके जो उसकी आयु के बालकों के लिए सामान्य है।

(iii) पिछड़े बालकों की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्तिगत सामर्थ्य बढ़ाना है।

(iv) डिसलेक्सिया सीखने में अक्षमता के कारण है

(v) सीखने में अक्षम प्रायः ध्यान केन्द्रित कर पाने में समर्थ होते है।

16.8 सामाजिक रूप से विशिष्ट बालक–

समाज के अनुरूप व्यवहार न कर सकने वाले बालक सामाजिक रूप से विशिष्ट बालक कहलाते हैं।

16.8.1 बाल–अपराधी

बालक के व्यक्तित्व के समुचित विकास में सामाजिक नियन्त्रणों तथा सामाजक मानकों की विशेष भूमिका है। बालक के विकास में परिवार के साथ–साथ सामाजिक वातावरण, बालक की इच्छा आकांक्षाए तथा महत्वाकांक्षा का भी प्रभाव पड़ता है। बाल अपराधी वह है जो समाज के नियमों तथा कानूनों का उल्लंघन इस प्रकार करते हैं कि वह विभिन्न असामाजिक गतिविधियों में लिप्त हो जाते हैं।

हैली के अनुसार एक बच्चा जो सामान्य व्यवहार के प्रस्तावित मानकों से भिन्न व्यवहार करता है अपराधी बालक कहलाता है। जैविकीय दृष्टिकोण के अनुसार बालक के स्नायुमण्डल में किन्हीं प्रकार की गड़बड़ियां होने पर वह असमाजिक व्यवहार करने लगता है। अतः असामाजिक व्यवहार करना जन्मजात होता है।

उपर्युक्त दृष्टिकोणों के अनुसार बाल अपराधी के व्यवहार का विश्लेषण करने पर निम्न बाते प्रमुख है।

1. अपराधी बालक असामाजिक गतिविधियों में लिप्त रहते है तथा सामाजिक मानकों का उल्लंघन करते है।
2. बाल अपराधी एक किशोर होते हैं जो लगभग 12 वर्ष से 21 वर्ष की आयु के मध्य होता है।
3. उनकी असामाजिक गतिविधियां इतनी अधिक होती है कि उनके प्रति कानूनी कार्यवाही आवश्यक होती है।
4. इन्हें किशोर बन्दीगृहों में रखा जाता है।

अपराधी क्रियाओं के प्रकार– भारतीय संविधान के परिपेक्ष्य में बाल–अपराध ा में वे सभी व्यवहार आ जाते है जिनमें सामाजिक, नैतिक मूल्यों की अवहेलना की जाती है अथवा राष्ट्रीय बाल अधिनियम 1920, 1924, 1948, 1960 और 1978 का उल्लंघन होता है।

1. अर्जन करने की प्रवृति
2. धोखा धड़ी
3. उग्र प्रवत्तियां
4. बचाने या भागने की प्रवृति
5. यौन अपराध

बाल अपराध के कारण –

बाल अपराध के मनोवैज्ञानिक, व्यक्तिगत, सामाजिक और आर्थिक कारक होते है।

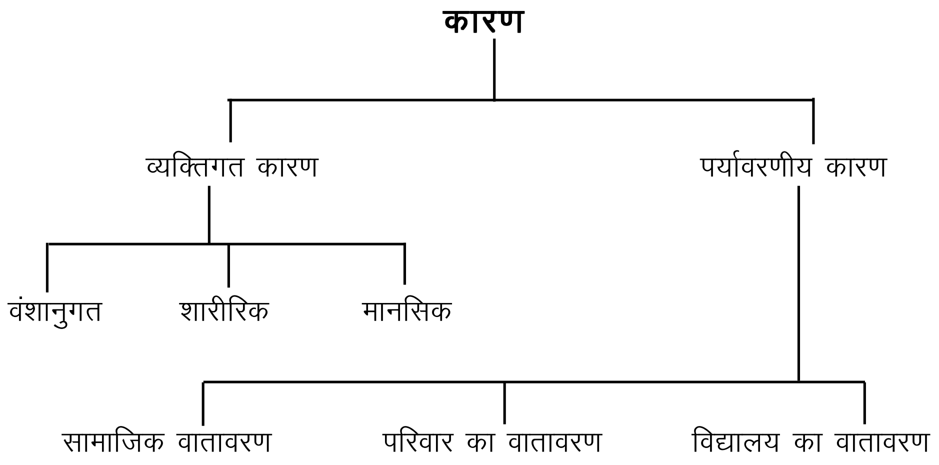

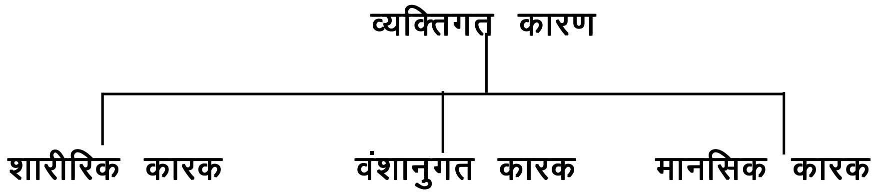

शारीरिक कारक

1. शारीरिक संरचना
2. शारीरिक दोष
3. पैतृक दोष
4. अविकसित शरीर
5. कम विकसित शरीर
6. गम्भीर बिमारी

मानसिक कारक

1. बौद्धिक कारक
2. संवेगात्मक निर्बलता
3. मानसिक रोग
4. मनोस्नायु विकृति
5. हीन भावना

वातावरणीय कारक

परिवार का वातावरण	विद्यालय का वातावरण	समाज का वातावरण
(1) भग्न परिवार	(1) विद्यालय का संवेगात्मक वातावरण	1) आर्थिक असमानता
(2) दूषित अनुशासन	(2) विद्यालय की स्थिति	2) गन्दी बस्तियाँ
(3) असुरक्षा या अत्यधिक सुरक्षा	(3) अनुशासन का अभाव	3) बेरोजगारी
(4) अनैतिक परिवार	(4) शिक्षकों द्वारा पक्षपातपूर्ण व्यवहार	4) बुरी संगति
(5) सामाजिक आर्थिक स्थिति	(5) पुस्तकालय तथा अन्य खेल की सुविधाओं का अभाव	5) अपराधी क्षेत्र
(6) माता पिता का चरित्र	(6) निर्देशन सेवाओं का अभाव	
(7) माता पिता की अभिवृत्ति		
(8) नौकरों की संगति		

बाल अपराध के उपचार– बाल अपराध एक सामाजिक समस्या है अतः इसके उपचार करते समय दो बाते प्रमख है (1) जो बाल अपराधी है उनका उपचार करना (2) ऐसी शिक्षा तथा क्रिया करवाना जिससे वे पुनः अपराध में लिप्त न हो।

मनोवैज्ञानिक विधियां– इसमें निरीक्षण करके अपराध की मात्रा का पता लगा कर अपराधी को निम्न विधियों द्वारा ठीक करने का प्रयास किया जाता है।

(1) पुनः शिक्षा– इसमें शिक्षा का उद्देश्य केवल पढ़ना लिखना ही नही वरन् समस्या के प्रति जानकारी देकर आत्म का निर्माण करना है।

(2) अनिर्देशित विधि – इसमें बालक को अपनी दमित इच्छाओं और संवेगों को व्यक्त करने का अवसर दिया जाता है।

(3) प्रोत्साहन – इसमें बाल अपराधी को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वह भविष्य में इस प्रकार का अपराध नही करेगा।

(4) वातावरणीय उपचार– इस विधि में बालक के परिवार तथा सामाजिक वातावरण में सुधार लाने का प्रयास किया जाता है।

(5) सुझाव और परामर्श– इसमें बाल अपराधियों को सकारात्मक सुझाव देकर उन्हें सही रास्ते पर लाया जाता है तथा परामर्श के द्वारा उनके परम अहम्

को सुदृढ़ किया जाता है।

16.8.2 मादक–द्रव्य व्यसनी बालक–

मादक द्रव्यों का सेवन प्राचीन काल से किसी न किसी रूप में किया जा रहा है। प्राचीन काल में सामाजिक और धार्मिक उत्सवों में इन पदार्थों का सेवन किया जाता था। भारतवर्ष में लगभग 2000 वर्ष पूर्व भांग व चरस का सेवन किया जाता था। आधुनिक समाज के प्रत्येक वर्ग में मादक पदार्थो के सेवन की लत बढ़ रही है। मादक द्रव्य से तात्पर्य उन द्रव्य तथा औषधियों से है जिनका उपयोग नशा, उत्तेजना, उर्जा तथा प्रसन्नता के लिए किया जाता है। चरस, गांजा, भांग, अफीम, कोकीन आदि का सेवन करने वाले को मादक द्रव्य व्यसनी कहा जाता है। जिन मादक पदार्थो का अत्यधिक प्रयोग किया जाता है उन्हें मुख्य रूप से छः श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

1. शराब
2. शामक पदार्थ
3. उत्तेजक पदार्थ
4. तन्द्राकर पदार्थ
5. भ्रमोत्पादक पदार्थ
6. निकोटीन

मादक द्रव्य व्यवसन के कारण – मादक द्रव्यों का प्रयोग किसी भी स्तर पर हो सकता है परन्तु यह सबसे अधिक किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था में पायी जाती है। इसके प्रमुख निम्नलिखित कारण है।

1. अधिकांश लोग मादक द्रव्यों का सेवन प्रारम्भ में दर्द को दूर करने के लिए करते हैं।
2. अधिकांश युवा वर्ग मादक पदार्थो का प्रयोग अपने भ्रम प्रभाव में करते है जिससे वे संसार की सत्यता से अपने को दूर करके एक कृत्रिम संसार स्थापित कर सके।
3. कभी–कभी बेराजगारी, अनिश्चित भविष्य, पारिवारिक परेशानियों, लिंग (Sex) परेशानियों आदि के कारण मादक पदार्थो का सेवन प्रारम्भ कर देते

हैं।

4. मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मादक पदार्थो का सेवन हीन भावना से बचने के लिए, किशोरावस्था में उत्पन्न तनाव को दूर करने के लिए, अवसाद को शांत करने आदि के लिए करते हैं।

5. दूषित सामाजिक वातावरण, भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद, पक्षपात जिसके कारण युवावर्ग ठीक प्रकार से शिक्षा एवं रोजगार नही प्राप्त कर पाते हैं तथा कुण्ठा का शिकार हो जाते है, मादक पदार्थो का सेवन प्रारम्भ कर देते है।

6. माता पिता का उचित नियन्त्रण न हो, दोनो माता–पिता का कार्यरत होना, संयुक्त परिवार का अभाव, परिवार का उच्च अथवा निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के कारण बालक मादक पदार्थो का सेवन करना प्रारम्भ कर देते है।

7. संगति के प्रभाव के कारण भी किशोर या युवा मादक पदार्थो का सेवन करते है।

मादक द्रव्य व्यसन के परिणाम– मादक पदार्थो का अत्यधिक सेवन करने से स्वास्थ्य में अचानक गिरावट आ जाती है। भूख कम लगती है तथा इन लोगों में विभ्रम की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। व्यक्ति अपने जीवन मूल्यों तथा सामाजिक मूल्यों को भूल जाता है। विक्टर हार्सले ने अपने अध्ययन में यह पाया कि मादक द्रव्यों के प्रभाव से व्यक्ति मे सनकीपन, चर्मराग, हृदयरोग, लीवर की समस्या उत्पन्न हो जाती है। जिससे उनका व्यक्तिगत अपराधी, तनावग्रस्त तथा अकर्मण्य हो जाता है। मादक पदार्थो के सेवन से झूठ बोलना सीख जाता है तथा उलझन भरा स्वभाव हो जाता है। ये बालक विद्यालय से अधिकांश अनुपस्थित रहते है तथा जब भी संभव होता है पैसा चुराने में किसी भी प्रकार का संकोच नही करते हैं। मादक द्रव्यों के सेवन में अधिकांश युवा वर्ग होता है अतः यह सामाजिक विकास में बाधक होते हैं। मादक पदार्थो के दुरूपयोग के परिणाम स्वरूप दंगे, हत्यायें, बलात्कार, अपहरण, अभद्रता, अनैतिक कार्य तथा व्यवहार बढ़ते जा रहे हैं।

निरोधक उपाय–मादक पदार्थो के व्यसन की समस्या गम्भीर रूप धारण

कर चुकी है। वर्तमान समय में सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि इसके शीघ्र रोकथाम, समय से नियन्त्रण तथा इन्हें पुनः सामान्य जीवन जीने की तकनीकों तथा विधियों का ज्ञान सबको दिया जाए। शिक्षा को एक सशक्त साध ान के रूप में प्रयोग कर अभिभावकों, सरकार, गैरसरकारी संस्थाओं (NGOs) तथा निर्देशन कर्त्ताओं को इस बढ़ती हुयी समस्या को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम अभिभावकों को परिवार का वातावरण स्वस्थ तथा स्थायी रखने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि इस प्रकार के व्यवहार का एक प्रमुख कारण प्यार की कमी होता है। शिक्षक को विभिन्न स्तरों जैसे स्कूली छात्रों, कालेज तथा विश्वविद्यालय के छात्रों तथा अन्य युवाओं को मादक पदार्थो के दुरूपयोग की जानकारी देनी चाहिए इसके लिए इस प्रकार के व्यक्तियों की बाते ध्यानपूर्वक सुननी चाहिए तथा एक दोस्त के रूप में सहायता करनी चाहिए। शिक्षण संस्थाओं में पाठ्य सहगामी क्रियाओं पर बल दिया जाना चाहिए जिससे छात्र अपने अवकाश के समय का ठीक प्रकार से प्रयोग कर सके। व्यक्तित्व विकास के कार्यक्रम जैसे नेतृत्व करने का प्रशिक्षण, स्वानुशासन उत्पन्न करने का प्रशिक्षण, साहसिक कार्य एवं युवा कैम्पों की व्यवस्था नियमित रूप से की जाए। चुने हुये क्षेत्रों में व्यापक तथा अधिकांश सर्वेक्षण करना चाहिए जिससे यह पता लग सकेगा कि विभिन्न आयु और समदायों के लोगों में से कौन मादक पदार्थों का सेवन अधिक करते है इन आंकड़ों के आधार पर इनके रोकथाम के लिए कार्यविधि निर्धारित की जा सकती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिये नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान अंत में दिये गये उत्तरों से कीजिए।

10) बाल अपराधी क्रियाओं के चार प्रकार लिखिए।

....

....

....

11) मादक द्रव्य दुरूपयोग की रोकथाम के विद्यालीय उपाय लिखिए।

....

....

16.9 सारांश

शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य समाज में उपलब्ध मानवीय संसाधनों का पूर्ण उपयोग करके व्यक्तिगत कुशलता तथा समाज का विकास करना है। इसके लिए व्यक्तिगत सीमाओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालक जैसे शारीरिक रूप से विकलांग बालक, प्रतिभाशाली बालक, मानसिक मंद, पिछड़े बालक, सीखने में अक्षम या धीमी गति से सीखने वाले बालक, बाल अपराधी तथा मादक द्रव्य व्यसनी की शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। इसके लिए आवश्यकतानुसार उन्हें पहचान कर विशेष विद्यालय, विशेष कक्षाएं, सामान्य कक्षाओं में विशेष व्यवस्था, अलग से कक्षा की व्यवस्था करना, व्यवसायिक शिक्षा प्रमुख है। शिक्षा द्वारा इन बालकों में आत्म विश्वास जागृत कर उनके कौशलों का विकास किया जा सकता है। इस इकाई में हमने आपकों विशिष्ट बालकों की पहचान तथा उनकी शिक्षा व्यवस्था के बारे में जानकारी देने का प्रयत्न किया है।

16.10 अभ्यास कार्य

आप अपने विद्यालय या आस पास के किसी विशिष्ट बालक का चयन कीजिए जिसका आप सुधार करना चाहते हो। चयनित बालक की विशेषताएं लिखिए तथा उसके आधार पर उसे किस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था देने के लिए कहेंगे स्पष्ट करें।

16.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 1) क

   2) ग

2. – पूर्णांध

   – आंशिक जन्मांध

   – आंशिक अन्धता

3. श्रवण यन्त्रों का प्रयोग

   ऊँचे स्वर में बोलना

कक्षा में बच्चों को आगे बैठाना

4. मुख संचालन अरूचिकर होता है।

भाषा के उतार चढ़ाव में कमी होती है।

भाषा आयु व शारीरिक विकास के अनुरूप नही होती है।

वाणी आसानी से समझ में नही आती है।

यह भाषा शास्त्र के अनुसार दोषपूर्ण होती है।

5. बैठने के लिए उचित फर्नीचर

आवश्यकतानुसार व्यवसायिक प्रशिक्षण

सीमाओं को देखते हुए क्रियाएं आयोजित होनी चाहिए।

निर्देशन की व्यवस्था होनी चाहिए।

6. बुद्धिलब्धि

उपलब्धि परीक्षण

निरीक्षण

7. मानसिक मंद की बुद्धिलब्धि 70 से नीचे होती हैं।

8. (क) प्रतिभाशाली एक धनात्मक गुण है जबकि मानसिक मंद ऋणात्मक

(ख) प्रतिभाशाली की बुद्धिलब्धि 120 से ऊपर होती है जबकि मानसिक मंद की 70 से नही।

(ग) प्रतिभाशाली बालक सामाजिक गुणों से परिपूर्ण होते है जबकि मानसिक मंद सामाजिक असामर्थ्य होते है।

9. सत्य कथन (ii) (iii) (iv)

असत्य कथन (i) (v)

10. धोखा–धड़ी, यौन अपराध, भगोड़ापन, उग्र व्यवहार

11. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन, गोष्ठियों तथा सम्मेलनों का आयोजन, व्यक्तित्व विकास के कार्यक्रमों की व्यवस्था, मादक द्रव्यों के

रोकथाम की छात्रों को जानकारी देना।

16.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Burt, (1950), Backward Children, University of London Press.

Dunn, L.M. (Ed) (1973) Exceptional Children in the Schools, Holt, Rinchart, Winston,

New York.

Telford, C.W. & Sawrey, J.M. (1972) The Exceptional Individual, Prentice Hall, New Jersey.